VOLUME - 5
ISSUE - 1
June - 2021

ISSN No. : 2456-2424
Impact Factor = 3.01

EMERGING RESEARCH JOURNAL

MULTIDISCIPLINARY INTERNATIONAL REFERRED JOURNAL

JABALPUR PUBLIC COLLEGE
RUN BY SHIV NARAYAN FOUNDATION

49, Karmeta Patan Road, Ahead of Radio Station,
Near R.T.O. Office, Jabalpur - 482002 (M.P.)
E-mail : erj.jpc@gmail.com
Website : www.erjjpc.org.in, www.jpc.org.in

VOLUME 5 ISSUE 1 EMERGING RESEARCH JOURNAL June 2021

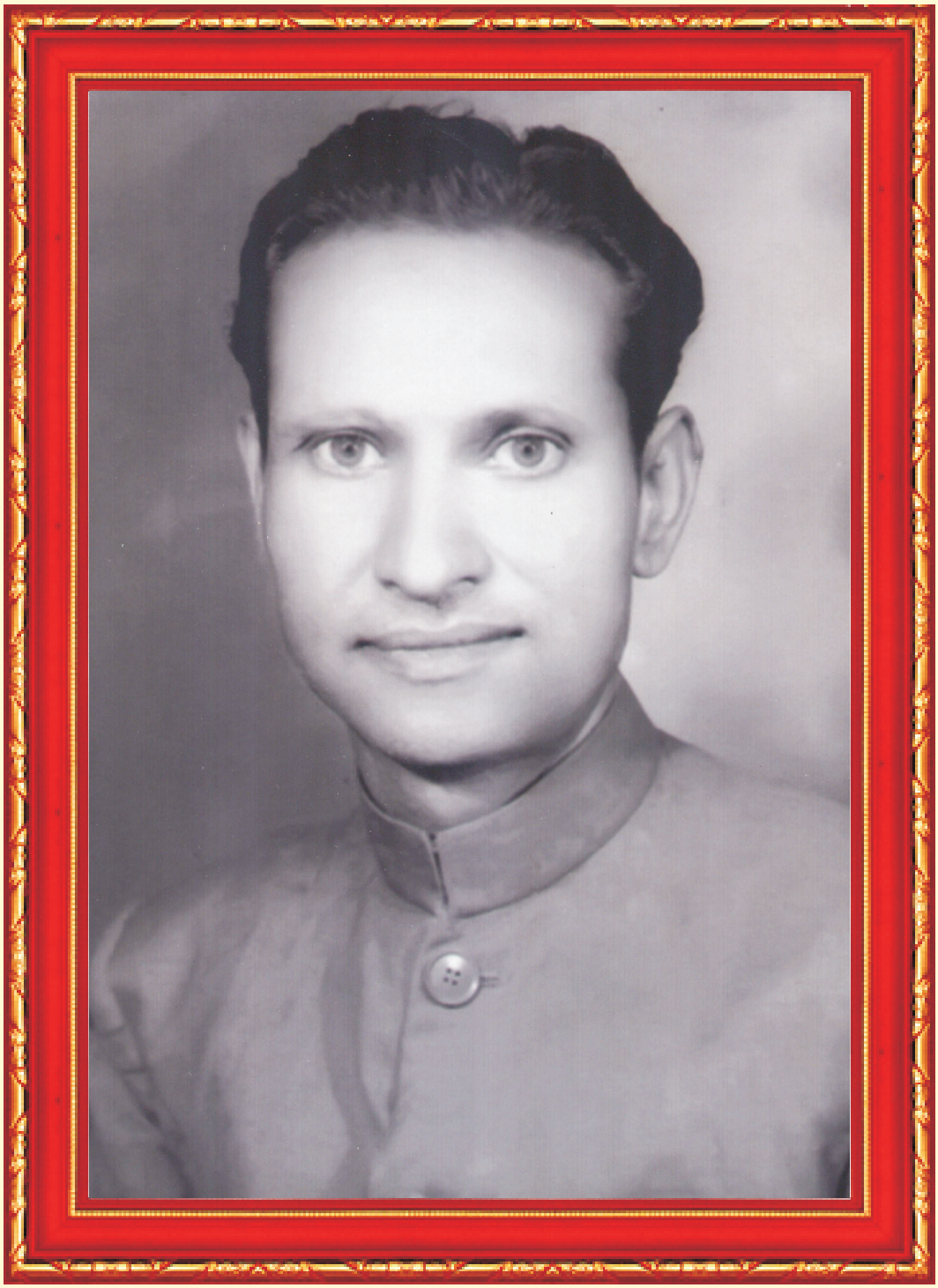

LATE SHRI SHIV NARAYAN VERMA

ISSN No. : 2456-2424
Impact Factor = 3.01

Emerging Research Journal

Vol. - 5 | Issue - 1 | June 2021

A Multi-Disciplinary International Research Journal

Emerging Research Journal is a high quality Journal devoted to the field of science, social science, education, commerce & Management. "Emerging research Journal" is an official Publication of the national society of Shiv Narayan Foundation. The Journal publisher original records, review articles, short communications, scientific survey, etc. Emerging Research Journal provides a forum for all above discipliner for development and research techniques and produces of laboratory investigations. It aims to Provide a highly readable and valuable addition to the literature which will serve as an indispensable reference for years to come. The Journal's core aims therefore, is to provide a platform for the researchers, scholars and research findings with the rest of the world there by facilitating informed decision which will improve society as a whole.

प्रो. एस.के मेहता

- पूर्व अध्यक्ष, शिक्षा संकाय
  रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर
- पूर्व डायरेक्टर इंचार्ज,
  राज्य विज्ञान शिक्षा संस्थान, जबलपुर
- प्रभारी अधिकारी, नरचरिंग समूह,
  राज्य स्तरीय विज्ञान मंथन यात्रा मध्यप्रदेश

संदेश

अत्यंत प्रसन्नता, गौरव और गरिमा का विशेष अवसर है जबकि जबलपुर पब्लिक कॉलेज, जबलपुर द्वारा प्रकाशित यह अंतर्राष्ट्रीय जर्नल अपने सफल प्रकाशन के पंचम वर्ष में प्रवेश कर रहा है। शिक्षा के क्षेत्र से संबंध इस अंतर्राष्ट्रीय जर्नल के लगातार सफल प्रकाशन हेतु शोध पत्रों का चयन, उत्तम व आकर्षणयुक्त प्रकाशन तथा सम्पादन करने वाली प्रबुद्ध टीम का हार्दिक साधुवाद। विशेष अभिनंदन और बधाई उनको जो इस टीम को सतत प्रेरित और उत्साहित करते रहते हैं। इस जर्नल के प्रकाशन की प्रारंभिक योजना के निर्माण, क्रियान्वयन और अंतर्राष्ट्रीय फाउन्डेशन और महाविद्यालय की प्रबंधन समिति के संचालक/अध्यक्ष श्री प्रवीण वर्मा का वंदनीय योगदान रहा है उनका शत-शत अभिनंदन। शोध कार्य, विशेषकर शिक्षा के क्षेत्र में किया गया शोध, सम्पूर्ण मानव जीवन को प्रभावित करता है। इतिहास साक्षी है कि इस धरा पर जीवन को सुखकर, अपेक्षाकृत अधिक सुरक्षित व समृद्ध बनाने में शोधार्थियों की भूमिका निर्विवाद रही है समस्त शोधकर्ताओं को हार्दिक बधाई।

मेरा आत्मिक विश्वास, साथ ही मेरी मंगलमयी शुभकामनाएँ, कि यह प्रकाशन अपनी उत्तरोत्तर विकास यात्रा में नित नवीन कीर्तिमान स्थापित करता रहेगा।

जबलपुर
07.08.2021

(एस. के. मेहता)

PATRONS

Shri Praveen Verma
Director, Jabalpur Public College
Jabalpur, (M.P.)

Dr. Kapil Dev Mishra
Vice Chancellor, RDVV
Jabalpur (M.P.)

Dr. Balbir Singh
USA
bsingh1932@msn.com

Father G.V. Vazhan Arasu
Principal, St. Aloysius College,
Jabalpur (M.P.)

Prof. S.K. Mehta
Retd. Principal,
State Institute of Science Education (SISE)
Jabalpur, Madhya Pradesh,
7587523884

Shri G.K. Judha
Retd. Principal,
Christian H.S. School, Jabalpur
Madhya Pradesh
9754588896

EDITOR IN CHIEF
Shri Bhupendra Nigam

EDITOR
Dr. Nivedita Paul

MANAGING EDITORS
Dr. Chitranshi Verma **Dr. P.L. Mishra** **Dr. Shweta Pandey**
Dr. Sudha Dwivedi **Dr. Priyanka Tamrakar**

ADVISORY BOARD
Dr. K.M. Bhandarkar, Gondia (M.H.)
Dr. V.K. Gupta, Kurukshetra, (Haryana)
Dr. V.M. Shashi Kumar,
Thiruvananthapuram, Kerala
Dr. V.K. Gupta, Kurukshetra (Haryana)
Dr. Damodar Jain, Bhopal (M.P.)
Dr. Prem Khatri, Nepal
Dr. Ashutosh Dubey, Jabalpur (M.P.)
Dr. Arun Shukla, Jabalpur (M.P.)
Dr. Raina Tiwari, Jabalpur (M.P.)
Dr. Nilima Bhagwati, Assam
Dr. K.K. Sharma, Kurukshetra, (Haryana)
Dr. Alka Nayak, Ex. Vice Chancellor
RDVV, Jabalpur (M.P.)
Dr. Sunil Pahwa, Principal,
G.S. College, Jabalpur (M.P.)
Dr. S.D. Singh, Mathura (U.P.)
Dr. Bhawana Soneji, Jabalpur (M.P.)
Dr. Rashmi Singh, Jabalpur (M.P.)

DISCLAIMER

The authors are solely responsible for the contents of the papers compiled in this volume. The publishers, Editors in Chief and the members of the Editorial Board do not take any responsibility for the same in any manner. Errors, if any, are purely unintentional & readers are requested to communicate such errors to the editors or publishers to avoid discrepancies in future.

ISSN No. : 2456-2424 : June 2021, Volume-5, Issue-1 / Impact Factor = 3.01

अनुक्रमणिका

क्र. पेज नं.

शिक्षा / Education

1. **डॉ. सुधा द्विवेदी** 1–4
आध्यात्मिक बौद्धिकता और शैक्षिक नेतृत्व

2. **डॉ. (श्रीमती) संध्या कोष्टा** 5–9
अभिभावकों के व्यवहार (पर्याप्त/अपर्याप्त) के संदर्भ में विद्यार्थियों के अधिगम व्यवहार और जिज्ञासा के स्तर का तुलनात्मक अध्ययन

3. **डॉ. सीमा परांजपे** 10–13
हाईस्कूल के विद्यार्थियों की अध्ययन आदतों पर आनलाईन कक्षाओं का प्रभाव

4. **Mr. Suresh Patle/ Jhamendra Kumar Harinkhere** 14-22
A Study of Teacher Participation In School Administration of CBSE & MP Board Schools

5. **Mrs. Soniya Dutta / Dr. Minakshi Shrivastava** 23-31
A Study of Adjustment Among Adolescent Students Living In the Presence and Absence of Father

6. **Mrs. Alka Middha / Dr. Rashmi Singh** 32-37
Effectiveness of Teaching Attitude Towards Teaching Profession of Higher Secondary School Teachers

7. **Mrs. Reena Sachan / Dr. Nivedita Paul** 38-42
Teacher-Educator's Attitude Towards e-Learning

विज्ञान / Science

8. **Mr. Vikas Jain** 43-48
Environmental Impact Assessment of Tribal Area's In Dindori District

विधि / Law

9. **Advocate Nishit Paul** 49-53
What the Borrower Should Know the SARFAECI Act?

प्रबंधन / Management

10. **डॉ. देवेश रंजन त्रिपाठी/ डॉ. अदिती गोस्वामी** 54–56
कोविड–19 रोग में आयुर्वेद प्रबंध

इतिहास / History

11. **श्रीमती आराधना कुमारी** 57–58
राजाराम मोहन राय–नारी स्थिति में सुधार

ललित कला / Fine Art

12. **डॉ. तापसी नागराज** 59–61
संगीत में आध्यात्म योग तथा रोग उपचार

13. **श्री रामलाल कुर्मी** 62–66
गुरूग्रंथ साहिब में संगीत विधान

14. **डॉ. एडलिन अब्राहम** 67–70
चिकित्सा के क्षेत्र में रंगों का मनोवैज्ञानिक प्रयोग

15. **श्री साजन कुरियन मैथ्यू** 71–77
भारतीय षडंग: चीनी चित्रकला के मूलाधार

आध्यात्मिक बौद्धिकता और शैक्षिक नेतृत्व की शिक्षा में भूमिका

*डॉ. (श्रीमती) सुधा द्विवेदी **

आलेख सार

सृष्टि की व्यापकता में मनुष्य समुद्र में एक बूंद है परंतु विज्ञान ने यह सिद्ध कर दिया है कि इस बूंद में भी असीम समुद्र सम्मिलित है। शरीर की संरचना, इसकी बनावट, इसके भिन्न-भिन्न अंगों तथा कोशिकाओं का जटिल कार्य चकित कर देता है और चौंकाने वाला है।

स्वामी विवेकानंद ने कहा है "There is divinity in every body." मनुष्य के अंदर सूक्ष्म दिव्यता तथा अलौकिक प्रकाश है। यह शरीर देहालय नहीं देवालय है। देवालय के प्रकाश दीप तक पहुँचना, यही जीवन का लक्ष्य है।

अंग्रेजी विश्वकोष में आध्यात्मिकता को ''चेतना की उच्चतम स्थिति'', ''असीम चेतना'', ''वैश्विक मन'' आदि अर्थों में परिभाषित किया गया है। आध्यात्मिकता पूजा पद्धति नहीं अपितु मनुष्य में निहित ईश्वरत्व ही है। यह बौद्धिक जागृति तथा एकात्म तत्व है।

प्रस्तावना

सृष्टि की व्यापकता में मनुष्य समुद्र में एक बूंद है परंतु विज्ञान ने यह सिद्ध कर दिया है कि इस बूंद में भी असीम समुद्र सम्मिलित है। शरीर की संरचना, इसकी बनावट, इसके भिन्न-भिन्न अंगों तथा कोशिकाओं का जटिल कार्य चकित कर देता है और चौंकाने वाला है। रक्त की एक बूंद में पांच लाख रक्त वर्ण तथा पांच हजार श्वेत वर्ण कोशिकाएँ और पांच सौ हजार अनियमित आकार के टुकड़े हैं। यह कितना अद्‌भुत रहस्यमयी संसार है। स्वामी विवेकानंद ने कहा है "There is divinity in every body." मनुष्य के अंदर सूक्ष्म दिव्यता तथा अलौकिक प्रकाश है। यह शरीर देहालय नहीं देवालय है। देवालय के प्रकाश दीप तक पहुँचना, यही जीवन का लक्ष्य है। ऋषि वेद व्यास ने कहा है ''आओ मैं तुम्हें एक रहस्य की बात बताता हूँ कि मनुष्य सृष्टि का सर्वश्रेष्ठ प्राणी है।'' आध्यात्मिकता हमारे व्यक्तित्व के साथ अभिन्न रूप से समायोजित है। इसके बिना जीवन में अधूरापन रहता है और उदात्त तथा व्यापक चिंतन का ह्रास होता जाता है। आत्म तत्व की अनुभूति एवं उसकी अभिव्यक्ति ही मनुष्य जीवन का परम लक्ष्य है। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए हमारी असीम चेतना उस असीम चेतना की निरंतर खोज करती रहती है। इस खोज से उसका आध्यात्मिक विकास का क्रम प्रारम्भ होता है।

व्यक्ति, विकास की प्रथम सीढ़ी है और मानव विकास का अंतिम स्थल है। व्यक्ति विकास के विविध सोपानों - परिवार, पड़ोस, समाज, राष्ट्र, विश्व तथा समस्त सृष्टि की एक लघु इकाई है। सप्त पदी यात्रा की सुलभता से मानव आध्यात्मिक प्राणी बनता है। जीवन यात्रा को सफल बनाने के लिए, सेवा इस मार्ग का सम्बल है और स्वार्थ है इसका अवरोध।

अंग्रेजी विश्वकोष में आध्यात्मिकता को ''चेतना की उच्चतम स्थिति'', ''असीम चेतना'', ''वैश्विक मन'',आदि अर्थों में परिभाषित किया गया है। आध्यात्मिकता पूजा पद्धति नहीं अपितु मनुष्य में निहित ईश्वरत्व ही है। यह बौद्धिक

***प्रोफेसर, जबलपुर पब्लिक कालेज, जबलपुर, (म.प्र.)**

जागृति तथा एकात्म तत्व है। जब जीवन में भौतिक संसाधनों का स्थान गौण हो जाता है और आंतरिक जगत के साधन सर्वस्व हो जाते हैं तब आध्यात्मिकता का उदय होता है। आध्यात्मिकता से व्यक्ति, पशु से नर तथा नर से नारायण की संज्ञा प्राप्त करता है। मनुष्य शरीर को सरल बनाने में शक्ति तथा अन्य साधनों का प्रयोग तो करता है परंतु आत्मिक आनंद के लिए सेवा भाव से कुछ नहीं करता, उसके स्थान पर अहम, ईर्ष्या, द्वेष, अप्रामाणिकता, लालच आदि अवगुणों से आत्मा को शीर्ण तथा जीर्ण बना देता है। मनुष्य केवल भोजन के लिए नहीं जीता।

आध्यात्मिकता से अभिप्राय ऐसी अंत:क्रिया अथवा जागरूकता से है जो मनुष्य को उसकी आत्मा (अतंरात्मा) से परिचित कराती है अर्थात् मनुष्य को आध्यात्मिकता की ओर ले जाती है जहां उसे सुख व शांति का अनुभव होता है। बुद्धि से अभिप्राय निर्माण या रचना करना है। बुद्धि जो केवल अर्थ मात्र है, इसकी कोई भौतिक सत्ता न होने के कारण इसके आयाम भी भौतिक नहीं हैं, अपितु ये केवल गुण मात्र है अर्थात् ''बुद्धि कार्य करने की एक विधि है।''

आध्यात्मिक बुद्धि से तात्पर्य एक ऐसी बुद्धि से है जो किसी भी व्यक्ति को आध्यात्मिकता (ईश्वर एवं आत्मा) की ओर ले जाती है। अत: व्यक्ति ध्यान, प्रत्यक्षीकरण एवं अवलोकन के माध्यम से स्वयं को ईश्वर को समर्पित कर देता है तथा जीवन मरण के चक्र से बाहर निकलकर मोक्ष को प्राप्त करता है। आध्यात्मिक बुद्धि वाला व्यक्ति व्यक्तिगत जीवन, पारिवारिक जीवन एवं कार्यात्मक जीवन के प्रति पूर्णतया उन्मुख हो जाता है तथा कैवल्य प्राप्ति के मार्ग पर अग्रसर हो जाता है। अत: अपनी अंतरात्मा को पहचानने के लिए आध्यात्मिक बुद्धि एक महत्वपूर्ण साधन की भूमिका निभाती है।

आध्यात्मिक बुद्धि के प्रवेश का क्रम निम्नानुसार प्रदर्शित किया जा सकता है-

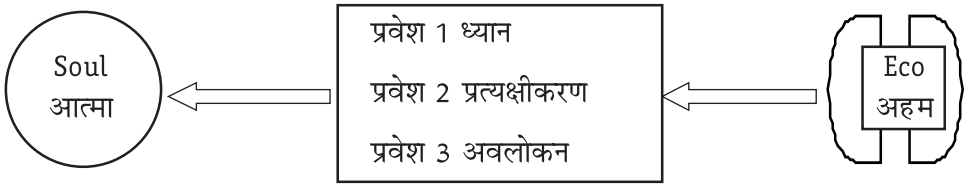

स्वयं के प्रति अनुभव - जागरूकता **शरीर एवं मस्तिष्क की अवस्थायें**

स्वामी विवेकानंद जी ने कहा है, ''अपने लिए जीना जीवन नहीं है, दूसरों के लिए जीना ही जीवन है। शिक्षा जीवन जीना सिखाती है, आध्यात्मिकता जीवन को परिष्कृत करती है और व्यक्ति को सबमें एक आत्मा का साक्षात्कार कराती है और इससे ही आत्मा की भूख मिट जाती है।''

स्वामी विवेकानंद जी ने आध्यात्मिक जीवन का आधार ध्यान को माना है क्योंकि ध्यान के आधार पर ही व्यक्ति अपने आपको भौतिक जगत से स्वतंत्र कर लेता है और वह ईश्वर या किसी लक्ष्य की ओर अपने आपको केन्द्रित कर लेता है। उनका दर्शन पुनर्जन्म के सिद्धांतों पर भी विश्वास करता है। स्वामीजी का मत है कि जीवन के लक्ष्य की व्याख्या के लिए मानवीय मस्तिष्क द्वारा इससे बढ़कर कोई दूसरी परिकल्पना कभी प्रस्तुत नही की गई। उनका यह दृढ़ विश्वास है कि प्रत्येक आत्मा अपने साथ इस जन्म में भूतकालीन अनुभवों को लेकर आती है।

दर्शन की पद्धति दार्शनिक अर्थात् बौद्धिक होती है। इसमें बौद्धिक विश्लेषण को ही प्रमुखता प्रदान की जाती है, जबकि धर्म की पद्धति में भक्ति का विशेष स्थान होता है जो कि भावना प्रधान होती है। जैसे कि आत्मा के सम्बंध में दर्शन का बौद्धिक विश्लेषण यही है कि ''आत्मा का न कभी संकुचन होता है, न विकास, इस तरह होने की प्रतीति मात्र है।'' धार्मिक पद्धति में भावना का स्थान होने के कारण आत्मा से सम्बंधित विचार यही है कि ''असत् कर्मों से वह संकुचित हो

जाती है, उसकी सम्पूर्ण शक्ति और स्वभाव संकोच को प्राप्त हो जाते हैं, फिर सत्कर्म करने से उस स्वभाव का विकास होता है।'' परंतु यह धर्म और दर्शन दोनों ही मानते हैं कि आत्मा में पहले से ही सम्पूर्ण शक्ति विद्यमान है। इस प्रकार इन दोनों में लक्ष्यों का अंतर भी साधन के इस अंतर के कारण ही होता है किन्तु इस विषय में यह नहीं समझ लेना चाहिए कि पद्धति का यह अंतर होने से यह दोनों एक-दूसरे के विरोधी हो गए हैं क्योंकि जहां भारतीय दार्शनिकों ने मोक्ष प्राप्ति के लक्ष्य तक पहुँचने के लिए भक्ति को अनिवार्य माना है वहीं धर्म में भी बौद्धिकता को महत्वपूर्ण स्थान प्रदान किया है।

स्वामी विवेकानंद ने अपने दर्शन में ब्रह्म को ही इस सृष्टि का आदि तत्व स्वीकार किया है अथवा वही इस सृष्टि का कर्त्ता उपादान कारण है। ब्रह्म सूत्र के आधार पर उन्होंने बतलाया है कि ''जिससे जन्म, स्थिति तथा प्रलय होता है वही ईश्वर है।'' वह अनंत, शुद्ध, नित्यमुक्त, सर्वशक्तिमान, अनिर्वचनीय, प्रेमस्वरूप, है।'' उन्होंने अपने दर्शन में सगुण और निर्गुण, साकार और निराकार दोनों प्रकार के ईश्वर तत्वों की विवेचना की है। निर्गुण ब्रह्मयोगियों के लिए एवं सगुण साधारणजनों का आराध्य माना गया है। ईश्वर सगुण है या निर्गुण इस पर वैदिक काल से ही विचार होते आया है। अत: दोनों ही एक है। स्वामी विवेकानंद ने मिट्टी का उदाहरण देकर सगुण और निर्गुण का भेद समझाया है- ''जब तक मिट्टी कुम्हार के हाथों कोई आकार ग्रहण नहीं करती वह निराकार अथवा निर्गुण रूप में रहती है। जब वह आकार ग्रहण करती है अर्थात् कुम्हार अपनी कुशलता द्वारा उसे मूर्ति, खिलौना या बरतन बना देता है तब निराकार मिट्टी साकार रूप धारण कर लेती है।'' लेकिन मूल तत्व मिट्टी ही है। आकार ग्रहण करने के पहले भी और आकार ग्रहण करने के बाद भी। भक्त साकार सगुण की उपासना आसानी से कर लेता है। ज्ञानी निराकार निर्गुण की उपासना का मार्ग अपनाता है, लक्ष्य दोनों का एक ही है- ईश्वर के परमतत्व की प्राप्ति। उस तक पहुँचने के मार्ग अलग-अलग हो सकते हैं, कौन किस मार्ग पर चलता है? यह उसकी साधनशीलता और व्यक्तिगत योग्यता पर, उसकी चेतना के स्तर पर निर्भर है। स्वामीजी का मानना है कि इस ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति सर्वशक्तिमान, सर्वव्यापी, निराकार तथा अखंड ब्रह्म से ही हुई है वही इस संसार का सृष्टिकर्ता है, वही इसका उपादान कारण भी है। संसार के सभी स्थूल पदार्थ और सूक्ष्म आत्माएँ ब्रह्म अर्थात् परमात्मा की ही अंश है। यह सारा संसार ब्रह्ममय है। ''ब्रह्म ही एक ऐसी शक्ति है जिसका कोई स्वरूप नहीं है वह निराकार है और माया के योग से साकार रूप धारण करता है।'' उनके अनुसार भौतिक तत्व और उसकी सत्यता में विश्वास से अपने को पूर्णतया पृथक करना ही यथार्थ ज्ञान है।

सकारात्मक विचार, सत्य-प्रेम-अहिंसा, संयम, सहकारिता, सह-अस्तित्व, तनावरहित जीवन, सुख-दु:ख, सम्भाव आदि आध्यात्म पथ को प्रशस्त करते हैं। आध्यात्मिकता से बौद्धिकता क्षमता में वृद्धि होती है। हम अर्जित शक्ति से अनेक विषयों के कुशल स्वामी बन सकते हैं। एकाग्रचित्तता से स्मृति तेज होती है और हम कितनी ही पुस्तकों को शब्दश: स्मरण करने में समर्थ हो जाते हैं।

शिक्षा के क्षेत्र में आध्यात्मिक बुद्धि का प्रयोग बालकों की आध्यात्मिक क्षमता का पता लगाने, उनकी अंतरात्मा से परिचित कराने, जिससे बालक स्वयं को जाने, बालकों को गम्भीर समस्याओं से छुटकारा दिलाने तथा प्रेम एवं सौहार्द का सम्बंध स्थापित करने हेतु किया जाता है। समाज में अनेक प्रकार के व्यक्ति होते हैं। कुछ व्यक्ति शारीरिक दृष्टि से शक्तिशाली होते हैं तो कुछ निर्बल। कुछ व्यक्ति मानसिक दृष्टि से बुद्धिमान होते हैं तो कुछ मूर्ख। यह भिन्नता इतिहास में आदिकाल से पाई जाती रही है और भविष्य में भी पाई जाती रहेगी। यह मनोवैज्ञानिक तथ्य है कि मनुष्य अपनी प्रशंसा चाहता है। वह चाहता है कि समाज के अन्य व्यक्ति उस व्यक्ति के पीछे-पीछे चलें और उसकी बात मानें। यही मनावैज्ञानिक तथ्य नेतृत्व को जन्म देते हैं। प्रत्येक समाज चाहे आदिम हो या आधुनिक, सभ्य हो या असभ्य, नेतृत्व की एक व्यवस्था पाई जाती है। वह व्यक्ति नेता होता है जिसे जनता का मत और विश्वास प्राप्त रहता है। नेतृत्व व्यक्तिगत पर्यावरण की परिस्थिति का वर्णन करने के लिए एक सामान्य विचारधारा है। जब एक व्यक्तित्व पर्यावरण में इस प्रकार स्थित हो कि उसकी इच्छा, संवेदना एवं

अंर्तदृष्टि एक सामान्य कारण का अनुगमन करने के अंतर्गत दूसरों को नियंत्रित एवं निर्देशित करती है। नेतृत्व में प्रभुत्व तत्व पाया जाता है। नेतृत्व से आशय दूसरों के व्यवहार को प्रभावित करने की योग्यता से है ताकि उनको सामूहिक उद्देश्यों की प्राप्ति की दिशा में स्वेच्छा से आगे बढ़ने के लिए प्रेरित किया जा सके।

नेतृत्व में दूसरों को मार्गदर्शन करने, लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए उन्हें प्रेरित करने, पहल करने की शक्ति जागृत करने, निर्देशन करने आदि कार्य सम्मिलित किये जा सकते हैं। किसी लक्ष्य की प्राप्ति हेतु संदेश वाहन के माध्यम द्वारा व्यक्तियों को प्रभावित कर सकने की योग्यता ही नेतृत्व है। नेतृत्व के द्वारा संगठनात्मक व्यवहार एवं आचरण में महत्वपूर्ण परिवर्तन सम्भव हो सकते हैं। नेतृत्व अभिप्रेरणा की आधारशिला, समन्वय की भावना का विकास, उच्चस्तरीय सहयोग की प्राप्ति, परिवर्तन शक्ति व प्रभाव शक्ति का विकास, उच्चस्तरीय विश्वास की स्थापना, व्यक्तित्व के विकास हेतु अत्यंत आवश्यक है।

अत: आध्यात्मिक बौद्धिकता एवं शैक्षिक नेतृत्व में आपसी सामंजस्य है जिसके माध्यम से मनुष्य मोक्ष की प्राप्ति के मार्ग की ओर प्रशस्त होता है। बिना नेतृत्व क्षमता के इस मार्ग में विघटनकारी शक्तियों का सामना करना कठिन हो जाता है। जब शिक्षा योजनाबद्ध ढंग से जीवन के प्रत्येक स्तर पर प्रयोग में लाई जाती है तो वह अनुभूत ज्ञान अथवा बुद्धिमत्ता में रूपांतरित हो जाती है। आज की शिक्षा का दुर्भाग्य है कि उसका स्वरूप बौना हो गया है और वह विद्या अक्षर ज्ञान और इससे आगे चलकर परीक्षा हो गई है तथा इसका जीवन से सम्बंध विच्छेद हो गया है। शिक्षा का मुख्य उद्देश्य जीवन मूल्यों से सुशोभित बालक का सर्वांगीण विकास करना माना गया है। यह असत्य से सत्य की ओर, अंधकार से प्रकाश की ओर तथा मृत्यु से अमरता की ओर ले जाने का सम्बल है। इसका प्रभाव अनंत तथा शाश्वत है। शिक्षा के इस पावन उद्देश्य को पूर्ण करने के लिए विद्यालय परिवार की एक व्यापक अवधारणा है। बालक, प्राचार्य, आचार्य, अभिभावक, पूर्व छात्र, समाज इस परिवार के अंगभूत हैं। विद्यालय की अंत:बाह्य गतिविधियों के माध्यम से सबको पुष्ट, सुसंस्कारित करने की आवश्यकता है। संस्कारक्षम वातावरण के सृजन में सबका सृजनात्मक सहयोग तथा अपनी भूमिका का निर्वाह करना अपेक्षित है। समुन्नत शिक्षा कार्य के प्रबंधन में, सम्पर्क, स्नेह तथा संस्कार को आधार बनाकर प्रभुत्व से नहीं अपितु नेतृत्व से कार्य करना होगा।

संदर्भ:-

1. बैस डॉ. नरेन्द्र सिंह, 2007 शैक्षिक प्रबंध एवं विद्यालय संगठन, जैन प्रकाशन मंदिर, जयपुर, संस्करण
2. बत्रा दीनानाथ, 2013, विद्यालय गतिविधियों की चरित्र-निर्माण एवं व्यक्तित्व विकास में भूमिका, शिक्षा संस्कृति उत्थान न्यास, नई दिल्ली, पृष्ठ 40, 48
3. गुप्त राजेन्द्र प्रसाद, स्वामी विवेकानंद व्यक्ति और विचार, राधा पब्लिशर्स, नई दिल्ली, पृष्ठ 43-44
4. गुप्ता डॉ. रेणु, गुप्ता डॉ. अवधेश कुमार, एवं कुमारी विनोद, 2016 अधिगम एवं शिक्षण, ठाकुर पब्लिशर्स, भोपाल, पृष्ठ 188, 189
5. त्रिपाठी सूर्यकांत,1951 भारत में विवेकानंद, रामकृष्ण आश्रम, नागपुर, पृष्ठ 348

•••

अभिभावकों के व्यवहार (पर्याप्त/अपर्याप्त) के संदर्भ में विद्यार्थियों के अधिगम व्यवहार और जिज्ञासा के स्तर का तुलनात्मक अध्ययन।

*डॉ. (श्रीमती) संध्या कोष्टा **

शोध सार

प्रस्तुत शोधपत्र में अभिभावकों के व्यवहार (पर्याप्त/अपर्याप्त) के संदर्भ में विद्यार्थियों के अधिगम व्यवहार और जिज्ञासा के स्तर का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि अभिभावकों के अपर्याप्त व्यवहार समूह के छात्र एवं छात्राओं के अधिगम व्यवहार के उच्च स्तर पर सार्थक अंतर पाया गया। अभिभावकों के अपर्याप्त व्यवहार समूह के छात्र/छात्राओं की जिज्ञासा के उच्च स्तर में कोई सार्थक अंतर नहीं पाया गया जबकि निम्न स्तर में सार्थक अंतर पाया गया। जबकि पर्याप्त व्यवहार समूह के छात्र/छात्राओं की जिज्ञासा के उच्च व निम्न स्तर में कोई सार्थक अंतर ज्ञात नहीं हुआ। अध्ययन के आधार पर सुझाव दिया जा सकता है कि अभिभावकों का दायित्व है कि वे बच्चों की प्रत्येक जिज्ञासा का यथासंभव उचित और त्वरित समाधान न केवल प्रस्तुत करें वरन् उसमें विभिन्न विषयों, तथ्यों के विषय जिज्ञासा को उभारने का प्रयास भी करें। ऐसा करने में बच्चों के अधिगम व्यवहार में अपेक्षित विकास होना संभावित है।

मुख्य शब्द :- *अभिभावकों का व्यवहार, अधिगम व्यवहार, जिज्ञासा*

प्रस्तावना - परिवार या घर एक छोटी सी सामाजिक संस्था है जो माता-पिता तथा बच्चों से बनती है। यद्यपि यह कहा जाता है कि परिवार प्रेम भावना के आधार पर एकजुट रहता है तथा पारिवारिक सदस्यों की भूमिकाएँ तथा अन्य सदस्यों की सोच या व्यवहार का लिंगगत परिस्थिति पर प्रभाव पड़ता है। परिवार में यदि अभिभावक लिंगीय भेदभाव न करके बालिकाओं को बालकों के समान अवसर प्रदान करते हैं तो लिंगीय महत्व से समाज को भी जागरूक बना सकते हैं, जिसका प्रभाव बालक-बालिकाओं के शैक्षिक विकास में देखा जा सकता है।

देशमुख, वर्मा, निगम (2009) ने उच्चतर माध्यमिक शालाओं में पढ़ने वाले छात्र-छात्राओं के पारिवारिक संबंधों का उनकी शैक्षिक उपलब्धि पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन किया एवं निष्कर्ष में पाया कि उच्च पारिवारिक संबंधों के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि निम्न पारिवारिक संबंधों के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि से अधिक थी। निम्न पारिवारिक संबंधों के छात्र व छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि में कोई अंतर नहीं पाया गया।

जीरट व कल्हर (2011) ने बालकों द्वारा प्रश्न पूछना और जिज्ञासा का अध्ययन कर निष्कर्ष दिया कि बालकों के प्रश्न पूछने व जिज्ञासा में सकारात्मक सहसंबंध पाया गया। परिणाम में यह भी बताया गया कि जो बालक अधिक जिज्ञासु होते हैं वे अधिक प्रश्न पूछते हैं। ऐसे बालकों के प्रश्न, समस्या समाधान करने में अधिक सहायक होते हैं।

उद्देश्य -अभिभावकों के व्यवहार (पर्याप्त/अपर्याप्त) के संदर्भ में विद्यार्थियों (छात्र एवं छात्राओं) के अधिगम व्यवहार और जिज्ञासा के स्तर का तुलनात्मक अध्ययन करना।

***सहायक प्राध्यापक, श्री गुरु तेगबहादुर खालसा महाविद्यालय, जबलपुर, (म.प्र.)**

परिकल्पना –

1. अभिभावकों के व्यवहार (पर्याप्त/अपर्याप्त) के संदर्भ में विद्यार्थियों (छात्र एवं छात्राओं) के अधिगम व्यवहार में लिंग भिन्नता के आधार पर सार्थक अंतर है। अभिभावकों के पर्याप्त व्यवहार समूह की छात्राओं का अधिगम व्यवहार अपेक्षाकृत करना है।
2. अभिभावकों के व्यवहार (पर्याप्त/अपर्याप्त) के संदर्भ में विद्यार्थियों (छात्र एवं छात्राओं) के स्तर (उच्च/निम्न) में लिंग भिन्नता के आधार पर सार्थक अंतर है। अभिभावकों के पर्याप्त व्यवहार समूह की छात्राओं की जिज्ञासा अपेक्षाकृत उच्च है।

शोध विधि – यह शोध वर्णनात्मक अनुसंधान के अंतर्गत आता है।

उपकरण–

1. अभिभावकों का व्यवहार मापनी (1998), आर. एल. भारद्वाज, एच. शर्मा एवं ए. गर्ग द्वारा निर्मित अभिभावकों के व्यवहार मापन हेतु (10.आयु वर्ग)
2. विद्यार्थी अधिगम व्यवहार मापनी (2002) सी. बी. सक्सेना द्वारा निर्मित विद्यार्थियों के अधिगम व्यवहार के मापन हेतु (6–12) वर्ष आयु वर्ग
3. बालकों की जिज्ञासा मापनी (1992) राजीव कुमार द्वारा निर्मित विद्यार्थियों की जिज्ञासा के मापन हेतु (9–14) वर्ष आयु वर्ग।

सारणी क्रमांक 01

अभिभावकों के व्यवहार (पर्याप्त/अपर्याप्त) के संदर्भ में छात्र एवं छात्राओं के अधिगम व्यवहार के स्तर (उच्च/निम्न) संबंधी तुलनात्मक परिणाम

अभिभावकों का व्यवहार समूह	अधिगम व्यवहार का स्तर	विद्यार्थियों की संख्या		मध्यमान	मानक विचलन	क्रांतिक अनुपात/ टी मान	सार्थकता स्तर
पर्याप्त N = 170	उच्च	छात्र	55	30.80	3.96	0.69	N.S.
		छात्राएँ	82	31.28	4.08		
	निम्न	छात्र	20	12.40	3.30	1.89	N.S.
		छात्राएँ	13	10.46	2.57		
अपर्याप्त N = 165	उच्च	छात्र	45	29.73	4.08	2.56	<0.05
		छात्राएँ	81	31.65	4.13		
	निम्न	छात्र	25	11.60	2.08	0.71	N.S.
		छात्राएँ	14	11.14	1.83		

स्वतंत्रता के अंश = 124 0.05 स्तर पर सार्थकता = 1.98

ISSN No. : 2456-2424 : June 2021, Volume-5, Issue-1 / Impact Factor = 3.01

उपरोक्त सारणी से स्पष्ट है कि अभिभावकों के व्यवहार (पर्याप्त/अपर्याप्त) के संदर्भ में विद्यार्थियों (छात्र/छात्राएँ) के अधिगम व्यवहार के स्तर (उच्च/निम्न) संबंधी तुलनात्मक परिणाम दर्शाते हैं कि अभिभावकों के अपर्याप्त व्यवहार समूह के छात्र एवं छात्राओं के अधिगम व्यवहार के उच्च स्तर पर सार्थक अंतर पाया गया। छात्राओं का मध्यमान अपेक्षाकृत उच्चतर (1.92) लिये हुये है और छात्र/छात्राओं के मध्य क्रामिक अनुपात का मान 2.56 ज्ञात किया गया है जो 0.05 विश्वास स्तर पर सार्थकता हेतु न्यूनतम निर्धारित मान 1.98 में अधिक है। अत: अभिभावकों के अपर्याप्त व्यवहार समूह के संदर्भ में अधिगम व्यवहार के उच्च स्तर पर सार्थक अंतर ($P<0.05$) पाया गया जबकि इसी समूह के निम्न अधिगम व्यवहार पर छात्र/छात्राओं के मध्य कोई सार्थक अंतर नहीं पाया गया। अभिभावकों के पर्याप्त व्यवहार एवं समूह के संदर्भ में छात्र/छात्राओं के मध्य उच्च एवं निम्न अधिगम व्यवहार का क्रांतिक अनुपात का मान क्रमश: 0.69 एवं 1.89 ज्ञात किया गया जो 0.05 विश्वास स्तर पर सार्थकता के लिए निर्धारित न्यूनतम मान 1.98 से कम पाया गया किंतु अभिभावकों के पर्याप्त व्यवहार समूह की छात्राओं के अधिगम व्यवहार के स्तर का मध्यमान अपेक्षाकृत तनिक उच्च अवश्य परिलक्षित हुआ। अत: अभिभावकों के पर्याप्त व्यवहार समूह के संदर्भ में छात्र/छात्राओं के मध्य उच्च एवं निम्न अधिगम व्यवहार में सार्थक अंतर ज्ञात नहीं हुआ।

अत: पूर्व निर्धारित परिकल्पना कि ''अभिभावकों के व्यवहार (पर्याप्त/अपर्याप्त) के संदर्भ में छात्र/छात्राओं के अधिगम व्यवहार के स्तर (उच्च/निम्न) में लिंग भिन्नता के आधार पर सार्थक अंतर है'' आंशिक रूप से सत्यापित हुई।

सारणी क्रमांक 02

अभिभावकों के व्यवहार (पर्याप्त/अपर्याप्त) के संदर्भ में छात्र अध्े छात्राओं की जिज्ञासा के स्तर (उच्च/निम्न) संबंधी तुलनात्मक परिणाम

अभिभावकों का व्यवहार समूह	अधिगम व्यवहार का स्तर	विद्यार्थियों की संख्या		मध्यमान	मानक विचलन	क्रांतिक अनुपात/ टी मान	सार्थकता स्तर
पर्याप्त N = 73	उच्च	छात्र	23	96.29	7.77	1.01	N.S.
		छात्राएँ	31	98.16	5.30		
	निम्न	छात्र	0.07	39.00	7.42	1.68	N.S.
		छात्राएँ	12	44.25	2.56		
अपर्याप्त N = 54	उच्च	छात्र	12	96.83	9.30	0.81	N.S.
		छात्राएँ	18	19.56	7.45		
	निम्न	छात्र	10	42.84	3.07	3.08	<0.01
		छात्राएँ	11	38.18	3.91		

स्वतंत्रता के अंश = 21 — 0.01 स्तर पर सार्थकता = 2.83

उपरोक्त सारणी से स्पष्ट है कि अभिभावकों के व्यवहार (पर्याप्त/अपर्याप्त) के संदर्भ में विद्यार्थियों (छात्र V/s छात्राओं) की जिज्ञासा के स्तर (उच्च/निम्न) संबंधी तुलनात्मक परिणाम दर्शाते हैं कि अभिभावकों के पर्याप्त व्यवहार समूह

के छात्र V/s छात्राओं की जिज्ञासा के उच्च और निम्न स्तर में कोई सार्थक अंतर नहीं पाया गया। अभिभावकों के अपर्याप्त व्यवहार समूह के छात्र V/s छात्राओं की जिज्ञासा के उच्च स्तर में कोई सार्थक अंतर नहीं पाया गया जबकि निम्न स्तर में सार्थक अंतर (P<0.01) पाया गया है। जहां छात्रों का मध्यमान अपेक्षाकृत उच्च (4.66) है। छात्र V/s छात्राओं के प्राप्त मध्यमानों के क्रांतिक अनुपात का मान 3.08 है जो 0.01 विश्वास स्तर पर सार्थकता हेतु न्यूनतम निर्धारित मान 2.83 से अधिक है।

निष्कर्षत: माना जा सकता है कि अभिभावकों के अपर्याप्त व्यवहार के संदर्भ में छात्र V/s छात्राओं की जिज्ञासा के निम्न स्तर में सार्थक अंतर (P<0.01) पाया गया किंतु उच्च स्तर में सार्थक अंतर नहीं पाया गया। अभिभावकों के पर्याप्त व्यवहार के संदर्भ में छात्रअध्छात्राओं की जिज्ञासा के उच्च व निम्न स्तर में भी कोई सार्थक अंतर नहीं पाया गया तथापि उच्च स्तर पर छात्राओं का मध्यमान अपेक्षाकृत उच्च (1.87) रहा।

अत: पूर्व निर्धारित परिकल्पना कि ''अभिभावकों के व्यवहार (पर्याप्त/अपर्याप्त) के संदर्भ में छात्र V/s छात्राओं की जिज्ञासा के स्तर (उच्च/निम्न) में लिंग भिन्नता के आधार पर सार्थक अंतर है'' आंशिक रूप से सत्यापित हुई।

विवेचना -

छात्र V/s छात्राओं के अधिगम व्यवहार के उच्च और निम्न स्तर के तुलनात्मक परिणाम में अभिभावों के अपर्याप्त व्यवहार के समूह में छात्र V/s छात्राओं के मध्य सार्थक अंतर (P<0.05) पाया गया और छात्राओं का मध्यमान अपेक्षाकृत आंशिक रूप में उच्च रहा। वैसे अभिभावकों के व्यवहार (पर्याप्त/अपर्याप्त) के संदर्भ में विद्यार्थियों और पृथक-पृथक छात्र, छात्राओं के अधिगम व्यवहार के स्तर (उच्च/निम्न) के तुलनात्मक परिणामों में कोई सार्थक अंतर उभर कर सामने नहीं आया।

राजीव (1989) द्वारा ''बालकों की जिज्ञासा वृत्ति, वृद्धि और शैक्षणिक उपलब्धि का अध्ययन'' कर दिये गये परिणाम के अनुसार ''बालकों की जिज्ञासा का स्तर बालिकाओं की तुलना में अधिक पाया गया। उच्च एवं निम्न जिज्ञासा स्तर के विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि में सार्थक अंतर पाया गया।'' किंतु प्रस्तुत शोध के परिणाम दर्शाते हैं कि अभिभावकों के व्यवहार के पर्याप्त समूह में छात्र V/s छात्राओं की जिज्ञासा के उच्च और निम्न स्तर में सार्थक अंतर प्राप्त नहीं हुआ। किंतु छात्राओं का मध्यमान दोनों ही समूहों में उच्च ज्ञात हुआ। अभिभावकों के पर्याप्त व्यवहार समूह के छात्र/छात्राओं के मध्य उच्च और निम्न जिज्ञासा स्तर पर और अभिभावकों के अपर्याप्त व्यवहार समूह में जिज्ञासा के उच्च स्तर पर छात्र/छात्राओं के मध्य कोई सार्थक अंतर उभरकर नहीं आया किंतु छात्राओं का मध्यमान जिज्ञासा के उच्च स्तर पर अपेक्षाकृत उच्च पाया गया। अभिभावकों के अपर्याप्त व्यवहार समूह में जिज्ञासा के निम्न स्तर पर छात्र V/s छात्राओं के मध्य सार्थक अंतर (P<0.01) पाया गया। इसमें छात्राओं की स्थिति अपेक्षाकृत निम्न पायी गयी। छात्रों के जिज्ञासा के निम्न स्तर का मध्यमान तुलनात्मक दृष्टि से उच्च पाया गया।

निष्कर्ष -

1. अभिभावकों के व्यवहार (पर्याप्त/अपर्याप्त) के संदर्भ में लिंग भिन्नता के आधार पर अपर्याप्त व्यवहार समूह के छात्र/छात्राओं के मध्य अधिगम व्यवहार के उच्च स्तर पर सार्थक अंतर (P<0.05) पाया गया। अभिभावकों के पर्याप्त व्यवहार समूह के छात्र/छात्राओं के अधिगम व्यवहार के उच्च/निम्न स्तरों पर एवं अभिभावकों के अपर्याप्त व्यवहार समूह के छात्र/छात्राओं के अधिगम व्यवहार के निम्न स्तर में कोई सार्थक अंतर नहीं पाया गया।

2. अभिभावकों के पर्याप्त व्यवहार समूह के संदर्भ में छात्र एवं छात्राओं के लिंग भिन्नता के आधार पर जिज्ञासा के स्तर (उच्च/निम्न) में सार्थक अंतर नहीं है।अभिभावकों के अपर्याप्त व्यवहार समूह में जिज्ञासा के उच्च स्तर पर छात्र V/s छात्राओं के मध्य सार्थक अंतर नहीं पाया गया जबकि जिज्ञासा के निम्न स्तर में छात्र V/s छात्राओं के मध्य सार्थक अंतर ($P<0.01$) पाया गया।

सुझाव -

1. विद्यार्थियों को अपने सहपाठियों के साथ नये-नये विषयों के विषय में विचारों का आदान-प्रदान करना चाहिए। इस प्रकार की प्रक्रिया में विद्यार्थियों के समक्ष नयी-नयी जानकारियाँ प्रस्तुत होती हैं व जिन विद्यार्थियों में नया जानने की इच्छा होती है, उन विद्यार्थियों का अधिगम व्यवहार प्रभावशाली रूप में आगे बढ़ता है।

2. विद्यार्थियों को अभिभावकों का पर्याप्त अथवा अपर्याप्त व्यवहार प्राप्त हो रहा है किंतु विद्यालय में उन्हें पुस्तकालय, पाठ्य सहगामी क्रियाएँ, क्रीड़ा और व्यायाम तथा इन सबसे ऊपर मार्गदर्शक शिक्षक उपलब्ध रहते हैं।

विद्यार्थियों को पुस्तकालय, पाठ्य सहगामी क्रियाओं और खेल-कूद का भरपूर लाभ उठाना चाहिए। पुस्तकालय में उनकी प्रत्येक जिज्ञासा का उन्हें समाधान मिलेगा, पाठ्य सहगामी क्रियाओं में भी इस दिशा में सहायता मिलने के साथ ही अवधान केन्द्रित करने, अवधान का विस्तार करने व व्यक्तित्व का विकास करने के अवसर उपलब्ध होंगे। शिक्षक का सहयोग और मार्गदर्शन विद्यार्थियों में बहुमुखी विकास में सहायक होगा।

अभिभावकगणों का दायित्व है कि वे बच्चों की प्रत्येक जिज्ञासा का यथासंभव, उचित और त्वरित समाधान न केवल प्रस्तुत करें वरन् उसमें विभिन्न विषयों, तथ्यों के विषय जिज्ञासा को उभारने का प्रयास भी करें। ऐसा करने से बच्चों के अधिगम व्यवहार में अपेक्षित विकास होना संभावित है।

संदर्भ :-

1. कपिल, एच.के. (1984) - अनुसंधान विधियाँ, तृतीय संस्करण, हर प्रसाद भार्गव, शैक्षिक प्रकाशन, आगरा
2. गैरेट, ई. हेनरी (1982-83) - शिक्षा एवं मनोविज्ञान में सांख्यिकी, कल्याणी पब्लिशर्स, नई दिल्ली
3. कुमार, राजीव (1993) -चिल्ड्रन्स क्यूरोसिटी इंटेलिजेंस एण्ड स्कॉलेस्टिक एचीवमेण्ट, प्रथम संस्करण, भार्गव बुक हाउस, आगरा
4. मन, नारमन एल. (1972) - मनोविज्ञान-मानवी समायोजन के मूल सिद्धांत, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली
5. पॉल बी.के. (2010) - बाल मनोविज्ञान, प्रथम संस्करण
6. पारिक, आशा - बाल विकास एवं पारिवारिक सम्बंध, कॉलेज बुक डिपो, जयपुर।
7. शर्मा, आर.ए. (2005) -छात्र का विकास एवं शिक्षण अधिगम प्रक्रिया, नवीन संस्करण सूची, आर. लाल बुक डिपो, मेरठ।

•••

हाईस्कूल के विद्यार्थियों की अध्ययन संबंधी आदतों पर ऑनलाईन कक्षाओं का प्रभाव

डॉ. सीमा परांजपे *

शोध सार

हमारे देश में विगत वर्षों से कोरोना (कोविड-19) महामारी के कारण स्कूल की कक्षाएँ बंद है। ऑनलाइन कक्षाओं के माध्यम से कक्षाएँ संचालित की जा रही हैं। प्रतिदिन चार-पाँच घंटे की कक्षाएँ ली जा रही है। यही एकमात्र पढ़ाई का विकल्प वर्तमान परिस्थितियों के लिए रह गया है। विद्यार्थी जहाँ इन कक्षाओं के माध्यम से घर में ही रहकर अपना कोर्स पूरा कर रहे है, वहीं इस नवीन माध्यम ने अनेक बुराइयों को जन्म दिया है, जिससे विद्यार्थियों का सामाजिक, आर्थिक, शारीरिक, मानसिक विकास प्रभावित हो रहा है। ऐसा होने के क्या कारण हैं? इस तकनीक से घर बैठे पढ़ाई के धनात्मक, ऋणात्मक प्रभाव क्या है? इन कमियों को दूर करने के लिए कौन-से सुझाव दिए जा सकते है? आदि बातों को जानने के लिए उपरोक्त शोध किया गया है। शोध के निष्कर्ष में पाया गया कि शालेय वातावरण की पढ़ाई अधिक उपयुक्त है एवं शाला की कक्षा में जो पढ़ाई होती थी उसमें विद्यार्थियों को पढ़ने में अधिक रूचि अनुभव होती थी।

प्रस्तावना :-

हमारे देश में मार्च के मध्य से कोरोना बीमारी के फैलाव के कारण स्कूल-कॉलेज लॉकडाउन के निर्णय के अधीन बंद है। जब से लॉकडाउन हुआ है, तबसे सभी बच्चे घरों में है इसमें सभी स्कूल एवं कॉलेज के विद्यार्थी सम्मिलित है। विद्यार्थियों की पढ़ाई का नुकसान न हो, इसके लिये कई प्रयास किये गये। जिन विद्यार्थियों का रिजल्ट लॉकडाउन के पूर्व आ चुका था, वे तो अगली कक्षाओं में गये ही , साथ ही वे सभी विद्यार्थी भी अगली कक्षा के लिये पदोन्नत कर दिये गये जिनके परिणाम नहीं आये थे। हाईस्कूल के साथ ही अगली कक्षा के लिये ऑनलाईन कक्षाये चलाने के आदेश आ गये। स्कूल के शिक्षकों ने प्रतिदिन 3-4 घंटे की ऑनलाईन क्लास लेना प्रारंभ कर दिया जिससे विद्यार्थियों की पढ़ाई का नुकसान ना हो। ये कक्षायें प्रत्येक विषय के शिक्षक ने ली। लगभग 15 महीने से अधिक का समय बीत चुका है। अभी भी ये ऑनलाईन कक्षायें चल रहीं है। प्रमुख निजी स्कूलों के विद्यार्थियों के माता-पिता ने उन्हें इसके लिये एक फोन उपलब्ध करा दिया गया, परंतु सरकारी स्कूलों में पढ़ने वाले विद्यार्थी अधिकांशत: निम्न मध्यम वर्गीय परिवार वाले होते है। जिनके माता-पिता के पास स्मार्टफोन नहीं है, ऐसे में शिक्षकों पर दबाब बहुत बढ़ जाता है।

ऑनलाईन कक्षाओं के विपरीत परिणाम सामने आने लगे है। अब तो मनोवैज्ञानिक भी यह मानने लगे है कि वर्चुअल कक्षायें शाला की कक्षाओं का स्थान हमेशा के लिये नहीं ले सकती। जब से ये कक्षायें प्रारंभ हुई हैं। तब से विद्यार्थियों को इसका क्या लाभ मिला? उनकी अध्ययन संबंधी आदतों पर इसका क्या प्रभाव पड़ा? यही सब जानने के लिये इस ज्वलंत विषय को चुना गया है।

उद्देश्य :-

प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य वर्तमान में कोरोना काल में लॉकडाउन में शिक्षकों द्वारा विद्यार्थियों के लिये आयोजित ऑनलाईन कक्षाओं का उनकी अध्ययन संबंधी आदतों पर प्रभाव ज्ञात करना है।

***सहायक प्राध्यापक**

परिकल्पना :-

उपरोक्त अध्ययन हेतु निम्न परिकल्पना ली गई-

1. अधिकांश विद्यार्थी घर में ऑनलाईन कक्षाओं की तुलना में शालेय वातावरण को अधिक महत्व देते है।
2. अधिकांश विद्यार्थियों के अध्ययन संबंधी आदतों पर ऑनलाईन कक्षाओं की तुलना में शाला में अध्ययन का धनात्मक प्रभाव अधिक है।

शोध पद्धति :

उपरोक्त शोध अध्ययन हेतु ऑनलाईन प्रश्नावली ;ळववहसम थ्वतउद्ध के द्वारा सर्वेक्षण पद्धति का उपयोग किया गया।

समंक :

प्रस्तुत अध्ययन हेतु निम्न समंक लिये गये-

1. सर्वप्रथम ऑनलाईन कक्षायें आयोजित करने वाले हाईस्कूल एवं हायर सेकेण्डरी के 10 शालाओं का चयन लॉटरी पद्धति से किया गया।
2. इसके पश्चात इन शालाओं में पढ़ने वाले हाईस्कूल एवं हायर सेकेण्डरी के 20-20 विद्यार्थियों (सामाजिक विज्ञान एवं वाणिज्य विषय के) का चयन लाटरी पद्धति के द्वारा सर्वेक्षण हेतु किया गया।

कारण एवं परिभाषा :

कई शालाओं ने दो महीने कक्षायें आयोजित करवाकर अब ऑनलाईन कक्षायें लेना बंद कर दिया है। कई महीनों की इन कक्षाओं में भी अधिकांश विद्यार्थी पारिवारिक वातावरण एवं ऑनलाईन कक्षाओं के मध्य तालमेंल नहीं कर सके। स्थान की कमी, डेटा की समस्या, पढ़ाई का वातावरण ना होना आदि अनेक कारण रहें-

1. 60% विद्यार्थियों ने ऑनलाईन कक्षाओं में रूचि प्रदर्शित की है। इसका कारण यह है कि हाईस्कूल के विद्यार्थियों को इस बात की चिंता है, कि लम्बे समय तक यदि स्कूल बंद रहे तो उनका कोर्स पूरा कैसे होगाघ
2. अधिकांश विद्यार्थियों ने स्वीकार किया कि उन्हें ऑनलाईन कक्षाओं की तुलना में स्कूल आकर पढ़ाई करना ज्यादा अच्छा लगता है। इसका कारण यह हो सकता है कि स्कूलों में पढ़ाई हेतु शांत वातावरण उपलब्ध होता है
3. 60% से अधिक विद्यार्थियों ने माना कि उन्हें घर में रहकर ऑनलाईन कक्षा की पढ़ाई करने से ज्यादा अच्छा शालेय वातावरण में जाकर पढ़ाई करना अधिक सुविधा जनक लगता है।
4. 60% से अधिक विद्यार्थियों ने स्वीकार किया कि उन्हें डेटा की समस्या एवं नेटवर्क की समस्या का सामना हमेशा करना होता है जिसके कारण वे कक्षाओं में नियमित उपस्थित नहीं हो पाते।
5. 75% विद्यार्थियों ने माना कि शिक्षक सभी छात्रों पर ध्यान देते है इसका कारण यह हो सकता है कि शिक्षक प्रत्येक विद्यार्थी की उपस्थिति मेल आईडी के माध्यम से लेते है।

6. 73% विद्यार्थियों ने कहा कि व स्कूल खुल जाने के बाद ऑनलाईन पढ़ाये गये पाठ्यचर्या को कक्षाओं में पुन:पढ़ना एवं समझना चाहते है।

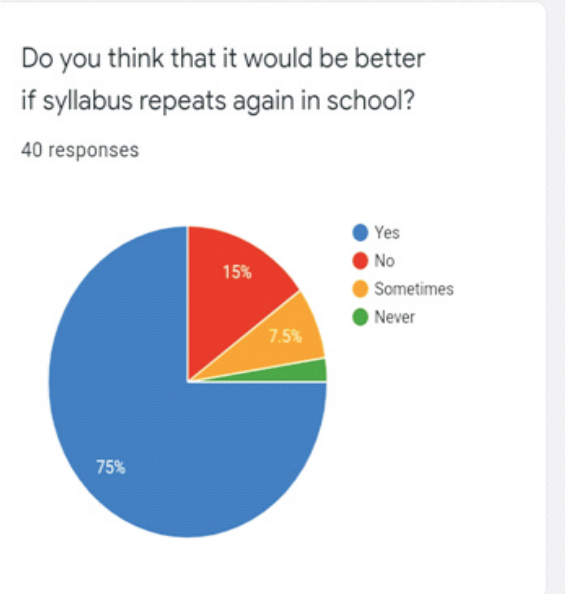

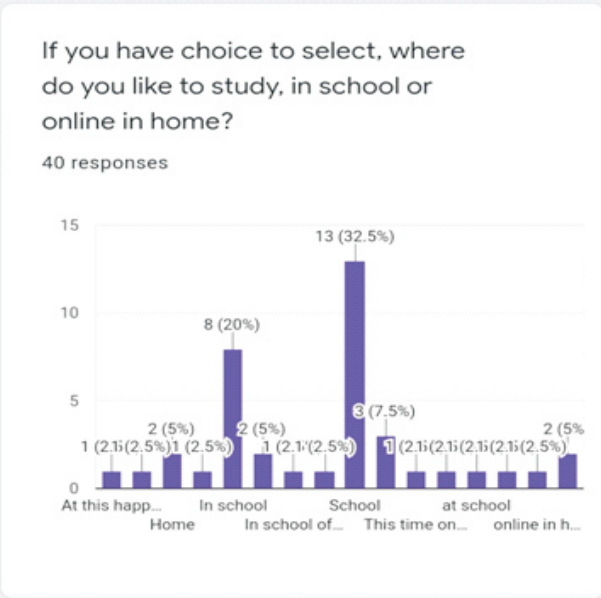

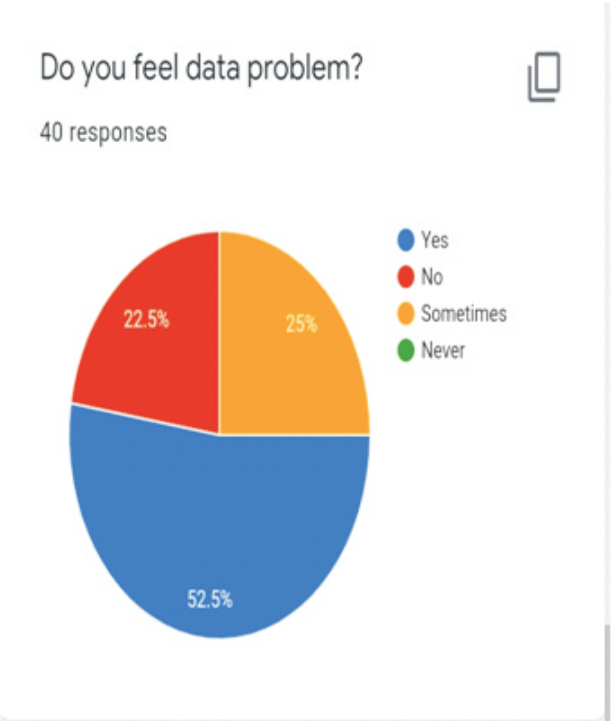

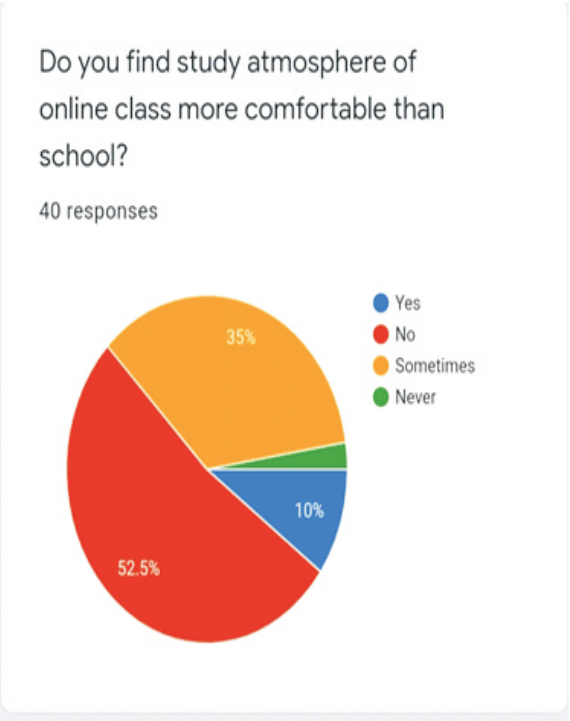

परिकल्पना की सत्यता :

प्राप्त निष्कर्षो एवं परिणामों के आधार पर परिकल्पना की सत्यता की जांच की गई–

1. प्रथम परिकल्पना ''अधिकांश विद्यार्थी घर में ऑनलाईन कक्षाओं की तुलना में शालेय वातावरण को अधिक महत्व देते है'' सत्य सिद्ध होती है क्योंकि इस प्रश्न पर प्राप्त परिणामों में अधिकांश प्रतिशत उन विद्यार्थियों का था जिन्होंने शालेय वातावरण को पढ़ाई हेतु अधिक उपयुक्त माना।
2. द्वितीय परिकल्पना ''अधिकांश विद्यार्थियों के अध्ययन संबंधी आदतों पर ऑनलाईन कक्षाओं की तुलना में शाला में अध्ययन का धनात्मक प्रभाव अधिक है'' भी सत्य सिद्ध होती है क्योंकि परिणामों का विवेचन करने पर ज्ञात होता है कि अधिकांश प्रतिशत उन विद्यार्थियों का है जिन्होने माना है कि ऑनलाईन कक्षाओं से पहले जो शाला की कक्षा में पढ़ाई होती थी उससे उन्हें पढ़ने में अधिक रूचि अनुभव होती थी।

सुझाव :

1. शिक्षकों को यह समझना होगा कि मात्र औपचारिकता निभाना नहीं है वरन् इस ऑनलाइन कक्षा को गंभीरता पूर्वक लेकर प्रारंभ करने से पूर्व छोटे से मोबाईल पर जब विद्यार्थी उन्हें समझने का प्रयत्न करेगा तो इसका फार्मेट एवं कार्यविधि कैसी होनी चाहिये? इसका पूर्वाभ्यास जरूर कर लें।
2. विद्यार्थियों एवं शिक्षकों के साथ परिवार के सदस्यों को भी नियमितता एवं अनुशासन बनाये रखना होगा, तभी ये कक्षायें सफल हो सकती है।
3. नवीन तकनीक से अध्ययन हेतु विद्यार्थियों एवं शिक्षकों को स्वयं जागरूक होकर उसके लाभों को समझना होगा एवं कठिनाइयों का समाधान करना होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची -

1. सक्सेना, डॉ. सविता 'मूल्य शिक्षा', ज्योति प्रकाशन आगरा
2. आर्य, पी.के 'प्रभावशाली व्यक्तित्व', मनोज पब्लिकेशन
3. सिंह, अरूण कुमार 'मनोविज्ञान समाजशास्त्र तथा शिक्षा में शोध विधियाँ' मोतीलाल बनारसीदास
4. मिश्रा, डॉ. महेन्द्र कुमार 'शैक्षणिक मूल्यांकन' अर्जुन पब्लिशिंग हाऊस
5. सिंह, जगत 'बालक और अभिभावक' प्रभात प्रकाशन दिल्ली'
6. भार्गव, महेश 'सांख्यिकी के मूल आधार'
7. महेशचन्द, भार्गव 'मनोवैज्ञानिक परीक्षण एवं मापन'
8. माथुर, डॉ. एस.एल. 'शिक्षा मनोविज्ञान'

•••

A Study of Teacher Participation In School Administration of CBSE & M.P. Board Schools

Mr. Suresh Patle*
Jhamendra Kumar Harinkhere**

Abstract

School administration is a process that includes the combined operation of a large number of persons whereby the whole fabric of education in the school is maintained in good working conditions. In the school, headmaster is considered as a skilled administrator, on whose ability, skill, personality and professional will largely depend the tone and efficiency of the school. He should be a good leader to be able to inspire teachers who work under his direction. In democracy, he cannot drive them. He should follow democratic leadership which is aimed at increasing the effectiveness staff and school. Hushdil (1985) found that both teachers and principals regard the democratic role as for school effectiveness. It is for a headmaster to realize that, he is a head-teacher, that many teachers as well qualified as experienced and as capable as himself and hence they must be given a positive say in matter of school administration. The headmaster and teachers can educate each other about new developments in educational theory and practice.

Introduction :

Man is a social animal. The role that each individual plays in this society depends on the kind of education he has had. So we can say that education is the basis of life and livelihood for the human race. Countries, school systems and individual schools are experimenting with new approaches to management that seek to run schools in ways that are right for the 21st century. Increasing teacher involvement in school decision making ranks among the most promising educational reform strategies. Yet empirical data about the conditions under which teachers will actually participate, if given the opportunity, are quite limited. In this study the researcher has emphasised on areas on which this selected study is applicable, on the objective of this study, which purpose is kept in focus while studying problem, what are the areas of the study and what are the expected results?

"Plants are shaped by cultivation and men by education……. We are born weak, we need strength; we are born totally unprovided, we need aid; we are born stupid, we need judgment. Everything we do not have at our birth and which we need when we are grown is given us by education." - Jean Jacques Rousseau

School and society both contribute to the education of an individual. While we cannot have direct control over the society, we can definitely have a regulated control over the school environment. Here is where the teacher steps in. The school management is involved in the policy making but it is the teacher who is the front-line executive to implement these policies keeping in mind various psychological aspects.

***Asst. Prof., Department of Education, Sardar Patel University, Balaghat, (M.P.)**
****Asst. Prof., Department of Education, Sardar Patel University, Balaghat, (M.P.)**

"Most teachers have little control over school policy or curriculum or choice of texts or special placement of students, but most have a great deal of autonomy inside the classroom. To a degree shared by only a few other occupations, such as police work, public education rests precariously on the skill and virtue of the people at the bottom of the institutional pyramid." -Tracy Kidder

To what extent the teacher is able to implement the management policies and how efficiently depends upon the individual teachers, their motivational level, their enthusiasm and their commitment. The head of the institution can only guide and suggest things but it is eventually for the teacher to bring into practice. Encouraging leadership amongst the staff can play a vital role in this. Educational administrators have, of late, been asked to change the way they operate. Noting the lack of follow-through that frequently results from state mandates, policymakers have taken a different tack. Like managers in the corporate world, educators are now being asked to flatten organizational structures, reduce central office directives and permit employees the opportunity to take ownership for institutional decision-making. Organizational theorists such as Argyris, MM Pregor, Herzberg, Likert, and Ouchie have all suggested that participatory decision-making (PDM) would lead to more effective organizations and higher staff morale. It has been demonstrated that, "Leaders who form effective management teams have a more pervasive influence than those who rely on their own personal efforts."

School Administration

An organisation is the result of the grouping of work and the allocation of duties, responsibilities and authority to achieve specific goals. People in various positions in the organisation have to carry these responsibilities and duties. Responsibilities would include broad statements of the job; whereas duties are the day-to-day jobs arising from the responsibilities. Management in an organisation involves planning, designing, initiating actions, monitoring activities and demanding results on the basis of allocated resources. It is policy making, policy control and monitoring. Administration on the other hand involves implementation of the policies, procedures, rules and regulations as set up by the management.

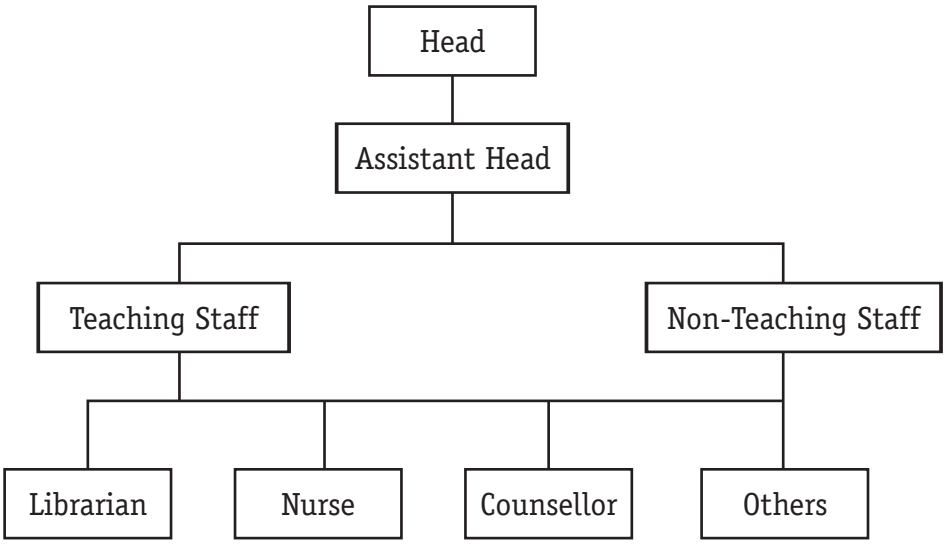

This simply model shows the hierarchy in the school authority which must be maintained for discipline. A school without discipline cannot be efficient or effective. To each of the offices there are specific duties attached and failure of one officer will affect the effective administration of the school.

'In order to transform schools successfully, educators need to navigate the difficult space between letting go of old patterns and grabbing on to new ones.' ***- Deal (1990)***

It is now widely recognised and agreed that one of the key factors affecting school effectiveness is the nature and quality of the leadership and management provided by each school head. The five main functions of managers are: planning, organising, directing, supervising and evaluating.

Planning -

"The beginning is the most iJabalpurortant part of the work." ***- Plato***

The first action of a school manager is to identify the mission of the school and to set the objectives. The head will then need to identify different strategies by which to achieve the agreed mission and objectives.

Organising -

Organising involves putting in order of priority and preference the resources which are available. An Action Plan is needed in which actions and activities are scheduled. In order to give the plan 'teeth', targets are set. These targets should be quite easily attainable within a short period of time.

Directing/Communicating -

"Good communication does not mean that you have to speak in perfectly formed sentences and paragraphs. It isn't about slickness. SiJabalpurle and clear go a long way." - John Kotter

The manager needs to direct the implementation of the plan. He or she should provide leadership by delegating duties and responsibilities to staff, and by motivating them. The directing process also involves co-ordinating and controlling the supply and use of resources.

- **Supervising/Controlling**

  The manager will need to supervise the work which is being done, ensuring that activities are carried out in line with agreed standards, and taking steps to correct problems.

- **Evaluating**

  "*One of the great mistakes is to judge the policies and programs by their intentions rather than their results.*" ***- Milton Friedman***

The final part of the management cycle is to assess the results and compare them with the set targets and objectives. The performance of all the staff including the managers should be assessed. The feedback is needed in the adjustment of future plans.

A manager of a school cannot achieve the goals and objectives set all alone. He/she needs an administrator to carry out these plans and actions who in turn needs to use the talents of the teachers who work under him/her, trusting them and having confidence in them. Moreover, making use of even the most critical or un-co-operative members of the may result in their feeling more motivated and needed.

Available skills and talents when used optimally through delegation and a sense of belonging, promotes creativity and a higher degree of staff morale. This style is based on the belief that where people are committed to the service of ideas which they have helped to frame, they will exercise self-control, self-direction and be motivated. All these ideas promote job interest and encourage both staff and students to set their own targets and find the best way of achieving them.

Scope of the Study

The word organisation comes from the word organ, and organs are living things. All these organs have specific work to do. A healthy living body has all its organs working properly. A healthy society has all its organisations working well in relation to one another. Societies set up organisations to do specific work. An organisation is thus the result of the grouping of work and the allocation of duties, responsibilities and authority to achieve specific goals.

"The perennial challenge facing school systems worldwide is how to improve student-learning outcomes. In the pursuit of improvements, educators introduce various innovations. Today, most of these innovations are being introduced in the field of educational management to encourage decentralization and implementation of collaborative school governance." -Anderson, 1998; Chan and Chui, 1997; Walker and Dimmock, 2000.

A school has its specific needs which need to identified and satisfied for the efficient and effective functioning of the school.

"*The only man who behaves sensibly is my tailor; he takes my measurements anew every time he sees me, while all the rest go on with their old measurements and expect me to fit them*". *- George Bernard Shaw.*

Different schools have different administrative policies to meet its needs. Further each administrative head also has an individual style of working. While some heads believe in centralised way, many of them, in the present scenario function in a decentralised manner, delegating duties and responsibilities to the staff.

Some people use management to mean administration. However, management in an organisation involves planning, designing, initiating actions, monitoring activities and demanding results on the basis of allocated resources. It is policy making, policy control and monitoring. Administration on the other hand involves implementation of the policies, procedures, rules and regulations as set up by

the management.

Some people use management to mean administration. However, management in an organisation involves planning, designing, initiating actions, monitoring activities and demanding results on the basis of allocated resources. It is policy making, policy control and monitoring. Administration on the other hand involves implementation of the policies, procedures, rules and regulations as set up by the management.

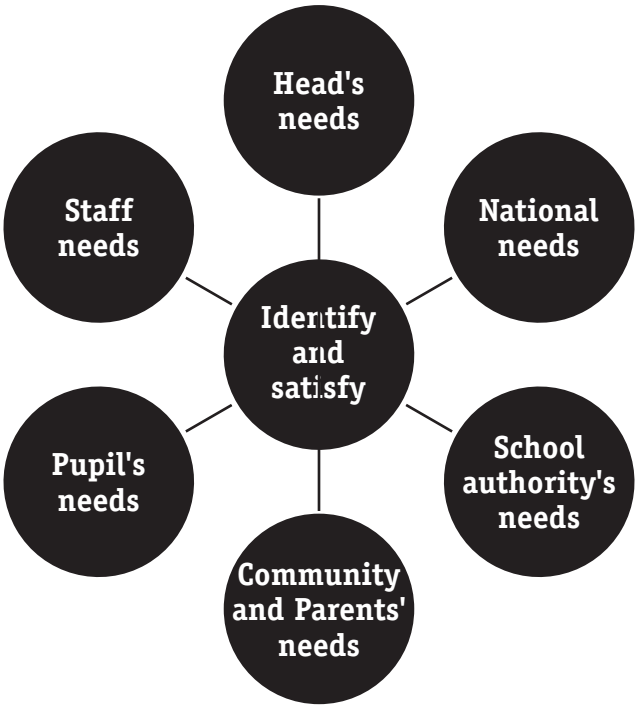

A school's needs -

Some people use management to mean administration. However, management in an organisation involves planning, designing, initiating actions, monitoring activities and demanding results on the basis of allocated resources. It is policy making, policy control and monitoring. Administration on the other hand involves implementation of the policies, procedures, rules and regulations as set up by the management.

Educational administration includes all aspects of planning, organizing and running educational systems and establishments as well as developing and lmplementing education policy, and the establishment and maintenance of standards and the systems used for assessment.

A school head plays the role of an administrator in the implementation of policies on education. No individual can run the organisation on his own. Duties need to be delegated in a cascade manner. Even the management principles state this.

The principle highlights that effective organisational performance is achieved when all persons and resources are synchronised, and given directions. This implies deliberate planned action towards the achievement of specific goals or policy objectives.

"Organizational development... requires a planned approach to change based on meeting the needs of both the people and the organization". ***- Killion & Harrison (1990).***

Schools today are complex organisations to manage. This is due to the fact that we now recognise the difficulties of providing for a wide range of abilities and interests amongst students, and the challenge of providing them with relevant and useable skills for them to succeed in an increasingly complex society. While in the past proficiency and success in classroom teaching were considered the only criteria for judging the quality of a teacher, today a wider range of skills are seen as necessary. One of the biggest challenges for teachers is that their role in the school management has also changed. The school needs them as individuals, who can make decisions and cope with the stress of the changing world of schools.

This is democratic style, in which the head involves the staff not only in decision-making and problem-solving processes but also in the day to day administrative processes, viz., planning, organising, directing, supervising and evaluating. A democratic style allows freedom of thought and action within the framework of the mission and objectives of the school.

"A teacher affects eternity; he can never tell where his influence stops." -Henry B. Adams:

Even in the best of schools there are teachers who do not want to share with others. They are the ones who close themselves in their room, and don't come out except for mandatory meetings. If the majority of the teachers in a school do this, then the school has a problem. Instead, a quality school creates an atmosphere where teachers want to share with each other. Schools which reward intra- and inter-departmental sharing see a huge increase in the quality of classroom teaching. "Every person in the organization must change inside their hearts and minds, so that they themselves become principle centred." - Stephen Covey

Statement of the problem -

The problem of the present study is stated in the following form:- "A study of teachers' participation in school administration of CBSE and M.P. Board schools"

Objectives of the Study -

A problem should be studied with some objectives. The present work serves the purpose to find out the following:

(a) To study the difference between the participation in school administration of CBSE and M.P. Board school teachers.

(b) To study the difference between the participation in school administration of male and female teachers of CBSE board schools.

(c) To study the difference between the participation in school administration of male and female teachers of M.P. Board schools.

(d) To study the difference between the participation in school administration of male teachers of CBSE and M.P. Board schools.

(e) To study the difference between the participation in school administration of female teachers of CBSE and M.P. Board schools.

Delimitations of the study -

This research had the following delimitations:

i. This study is confined to teachers of Balaghat Township.

ii. Secondary schools of Balaghat were selected for this study.

iii. This study is confined to only secondary school teachers.

In the past few years many researches on 'Teacher Participation' and 'Teacher empowerment' have been carried out. Previous researches show the difference between actual and desired teachers' participation and also the empowerment of teacher empowerment on the functioning of the school and the motivation level of the teachers. Teacher's participation in school administration differs from teacher to teacher and school to school. This may be pertaining to the family background, educational qualification, facilities provided, professional satisfaction and/or personal mental set up. It is very important for the management to know the level of participation of teachers in the school administration for formulating the administrative framework and delegation of duties which in turn is directly related to the smooth functioning of the institution. Till now a few work has been done on the topic "A Study of Teacher' Participation in School Administration of CBSE & M.P. Board Schools" hence it has been chosen for the present research.

In the present study, the investigator has decided to take up finite population.

Below is given the table showing population of the schools in Jabalpur.

Population of Secondary Schools

Types of schools	CBSE	M P	Total
Existing Schools	15	17	32

There are 15 CBSE schools and 17 M.P. Board schools having secondary wing. All the 32 secondary schools were taken for the present study.

Administration of the scale

The scale is self administrable. The test has to read the instructions provided on the first page of the test. There is no time limit. However, it requires a maximum of 15 minutes to respond to this scale. There are no right or wrong responses. Hence, the teachers are quite free to express their responses as they perceive themselves engaging in activity ranging from Always to Never.

Scoring of Items

The responses are recorded against each item under the five point scale, Always, Frequently, Occasionally, Rarely and Never and they have cells against each response. In this rating scale there were no negative items, all scale items were positive and they were scored equally. The scale continuum has been provided five points on the principle of equal appearing intervals pattern and arbitrary weights for each scale point was assigned as follows: The 'Always' point was given five(5) credits and 'Never' was scored as one(1) credit and three middle points Frequently, Occasionally, and Rarely were scored 4, 3 and 2 respectively.

Analysis of Results :-

There is no significant difference in the participation of female teachers of CBSE board and M.P. Board. Hence the proposed hypothesis is accepted. The following Hypotheses were raised for the study. There exists no significant difference between the participation in school administration of CBSE and M.P. Board school teachers.

There exists no significant difference between the participation in school administration of male and female teachers of CBSE board schools. There is significant difference in the participation of male and female teachers of CBSE board. Hence the proposed hypothesis H2 is rejected.There exists no significant difference between the participation in school administration of male and female teachers of M.P. Board schools.There is significant difference in the participation of male and female teachers of M.P. Board. Hence the proposed hypothesis H3 is rejected. There exists no significant difference between the participation in school administration of male teachers of CBSE and M.P. Board schools.

Suggestions -

It is suggested that school leaders wishing to enhance the levels of trust among the stakeholders in their schools should endeavour to achieve a balanced representation in the school council, utilize committees appropriately, share more information with other stakeholders, and provide adequate time for carrying out the responsibilities.

- System should be decentralised;
- The principal must use the staff to help make decisions;
- Provide a supportive environment that encourages teachers to examine and reflect upon their teaching and on school practice;
- Use specific behaviours to facilitate reflective practice;
- Make it possible for teachers to implement ideas and programs that result from reflective practice;
- Democratic participation should be encouraged.;
- Job rotation should be done so that all the teachers can equip themselves with necessary traits to become good leaders;
- Equal opportunity should be given to all staff members for carrying out different administrative responsibilities;
- When entrusting a responsibility, proper time should be allotted;
- Guidance should be given from time to time;
- Feedback and appraisals should form an integral part of the school management;

As we struggle with the concept and implementation of this paradigm called empowerment and restructuring, it has become increasingly evident that for one to be proud of the work one is doing and proud of the accomplishment of the school, one must have the power of shared governance. Trust is the foundation of shared governance, which provides the impetus for teacher leadership.

Bibliography :-

- A.C Joke (2011): "Teacher-status and commitment to duty: leadership implication for Nigerian education". International Journal of Educational Administration and Policy Studies Vol. 3(9), pp. 136-141, September 2011
- Smile Mark A. (1992) :"Teacher Participation in school Decision Making: Assessing willingness to participate". Educational Evaluation and Policy Analysis, Vol. 14, No. 1, Spring, 1992 , p 53-67
- Susan, M. and Nathan, K. (2000): "The Modalities of Teacher's Empowerment for Organising Creative Activities for Development of Various Abilities in Primary School Children". Journal of Educational Research and Extension, Vol. 37. No. 4. pp. 46-54. July 2006.
- Watonga C. O, Wan are Z, and Rare B. O. (2011): "Adults helping adults: Teacher-initiated supervisory option for professional development". International Journal of Educational Administration and Policy Studies .Vol. 3(8), pp. 117-120, August 2011
- White Paula A. (1992): "Teacher Empowerment Under 'ideal' School - Site Autonomy". Educational Evaluation and Policy analysis Vol. 14, No. 1, Spring, 1992 p. 69-82
- Sonata Srivastava (1999). : "A Study of Managerial Competencies of Effective Educational Managers". Abstracts of Research Studies Conducted by Teacher Education Institutions in India.

•••

A STUDY OF ADJUSTMENT AMONG ADOLESCENT STUDENTS LIVING IN THE PRESENCE AND ABSENCE OF FATHER

Mrs. Sonia Datta*
Dr. Meenakshi Shrivastava**

Abstract

The present study aimed to investigate the level of adjustment among the adolescent students living in the presence and absence of their father. In a sample of 100 adolescent students, 50 students (25 boys and 25 girls) living in the presence of father and 50 students (25 boys and 25 girls) living in absence of father were taken. Data was analyzed by using Standard Deviation, Mean and T-test. The result of the study indicated that there was no significant difference in the level of adjustment among students living in the presence and absence of father. The researcher also found that there is good adjustment level among students living in the absence of father. This indicates that the upcoming generation is more sincere and independent. The result is contradictory to the results of Subhash Sarkar (2017) and Kaushik Bhakta (2016) Anchal Agarwall, Nikita Kaul, Dr.Nidhi Gandhi, (2015). The study has implications for adolescent students, teacher, parents, Institute and future research.

Keywords : *Adjustment, Adolescent Students, Adolescent Students Living in the Presence absence of father.*

1. INTRODUCTION

Adolescence is an important developmental phase along the path of adulthood, a period of growth in which identity formation is addressed, moving towards becoming independent physically, emotionally and cognitively while still growing. They still require stability at home environment and a secure emotional base from which to explore and experience the world.

At this stage the family environment plays a vital role. Positive family connections are protective factors and provide a stability in home environment, along with a secure emotional base which is crucial for a positive development of adolescents.

The mother and father both play an equally important role in providing the basic facilities, emotional security and shaping the personality of adolescents.

Thus in the absence of any one of them especially of the father definitely affects the adolescents as mainly the father is the source of financial support and provides a sense of security to the adolescents.

"A car without fuel is a machine, sun without light is useless, man without oxygen is breathless like that, a family without father is headless."

- Samiskshya mohanty

*** M.Ed. Student, Jabalpur Public College, Jabalpur, (M.P.)**
**** Asstt. Professor, Jabalpur Public College, Jabalpur, (M.P.)**

At adolescent stage father plays an important role in framing the physical, emotional and intellectual behavioral development of adolescents. Father acts as a model for the adolescents because at this stage they learn many habits and form their behavior by learning many habits at home. Adolescents try to maintain privacy in all their matters concerned. They hide their deviant behaviors from their parents and develop isolated behavior. At this stage father should try to treat them like a friend, by sharing their experiences of life and guiding them about how to utilize their strength to achieve the targets in life. So in the presence of father the adolescent feels more secure and develops more confidence, but in the absence of a father, adolescents may not enjoy the life in the family.

This research is an attempt to study the adjustment among adolescents' students living in presence and absence of father.

2. NEED AND IMPORTANCE OF RESEARCH WORK

In different researches adjustment among adolescence student living in presence an absence of father were dealt with at school and college levels. (Dr. Prem shanker srivastav (2018), Dr. Subhash sarkar (2017), Tabiyad mansingbhai s. (2014), Dr Kamendu R.thakar (2014)). The review of kaushik bhakta (2016) Emphasized on adjustment level of adolescence student according to the gender (Male-Female), residential place (rural-urban) and educational streams (Art-Science) and found that Female students had good adjustment level then male students, average level of adjustment was observed irrespective of Rural-Urban area and studies conducted on the basis of educational streams that is Arts-Science showed low positive correlation on academic achievement.

Rapid social change has seen increasing, there are number of families were children are growing up without a father resident in the home. Father's absence may be due to death, outstation service, business, parental relation discord or other such causes. Fathers' presence and absence has an impact on adolescent.

Identification of the effects of the problem related with the adjustment among adolescence student living in the presence and absence of father will help in identifying the impact of the problem on adolescent and it can be dealt with in a more effective and healthier manner. For these reasons this study was aimed to identify the problem of adolescent students living in the presence and absence of father at secondary education level. For this, above mentioned problems was determined by referring to the views of school principals, vice principals and teachers of secondary schools of Satna.

3. Objectives

The objective of the present study is as follows:

- To study the adjustment of the adolescent students living in their father's presence and absence.
- To study the adjustment level of adolescent boys living in the presence and absence of father.
- To study the adjustment level of adolescent girls living in the presence and absence of father.

4. DELIMITATION

Although this research work has been done with utmost care and dedication and almost all possible fields are focused on, some delimitation was observed while doing this research.

- Time limit: The result of the research is based on the study between the years 2019-2021.

- Adolescent age: The adolescent age period is from 13 to 18 years and different age groups may have different problems whereas only the age group of 17 years (11th standard students) has been focused on.
- Research criteria: This research is based on the study of only private school students.

5. HYPOTHESIS

5.1 There will be no significant difference in adjustment of adolescent students living with their father presence and absence.

5.2 There will be no significant difference in adjustment level of adolescent boys living in presence and absence of father.

5.3 There will be no significant difference in adjustment level of adolescent girls living in the presence and absence of father.

6. Research Method

The technique taken up for the research study was survey method and results were analyzed statistically. The population of the research was predetermined and defined to the learners studying in class-XI of all the schools of satna city.

7. Sample

The sample comprises of both boys and girls studying in class-XI of all the schools of satna city. By following simple random stratified sampling altogether 100 boys/males and girls/females were selected from private schools.

8. Research Tools

The standardized tool used for the present study was "Adolescent Adjustment Scale" standardized by Dr. Ragini Dubey.

9. Result and result analysis

In order to study the nature of data, statistics mean, SD and critical ratio was used to analyze and identify the problems in adjustment among adolescent students whereas t-test was used to found out the significance of difference among student living in presence and absence of their father.

The first objective was to compare the mean scores of adjustment of adolescent students living in their father's presence and absence. The data were analyzed with the help of t-test and the hypothesis was tested and the results are given in table 1.

TABLE 1
Parent Wise Number, Mean, Standard Deviation and T-Value of Adjustment of Adolescents Students Living in their Father's Presence and Absence

Student	N	Mean	S.D.	t- value	Remark
Living in presence of father	50	37.28	4.88	0.94	Not
Living in absence of father	50	38.06	4.53		Significant

Degree of Freedom- 98

Minimum value at 0.50 level - 1.98

Minimum value at 0.01 level - 2.62

From Table 1 it can be seen that t-value is 0.94 which is not significant. It shows that the mean score of adjustment of adolescent students living in their father's presence and absence do not differ significantly .Thus the null hypothesis that, "there is no significant difference in mean scores of adolescent students living in their father's presence and absence," is not rejected. It may, therefore, be said that adolescent students living in their father's presence and absence were found to have same adjustment to some extent.

Graph No. 01

Graphical Presentation of Parent wise Mean difference of Adjustment Level of Adolescent students living in their Father's Presence and Absence

(Reference Table no. 9.1)

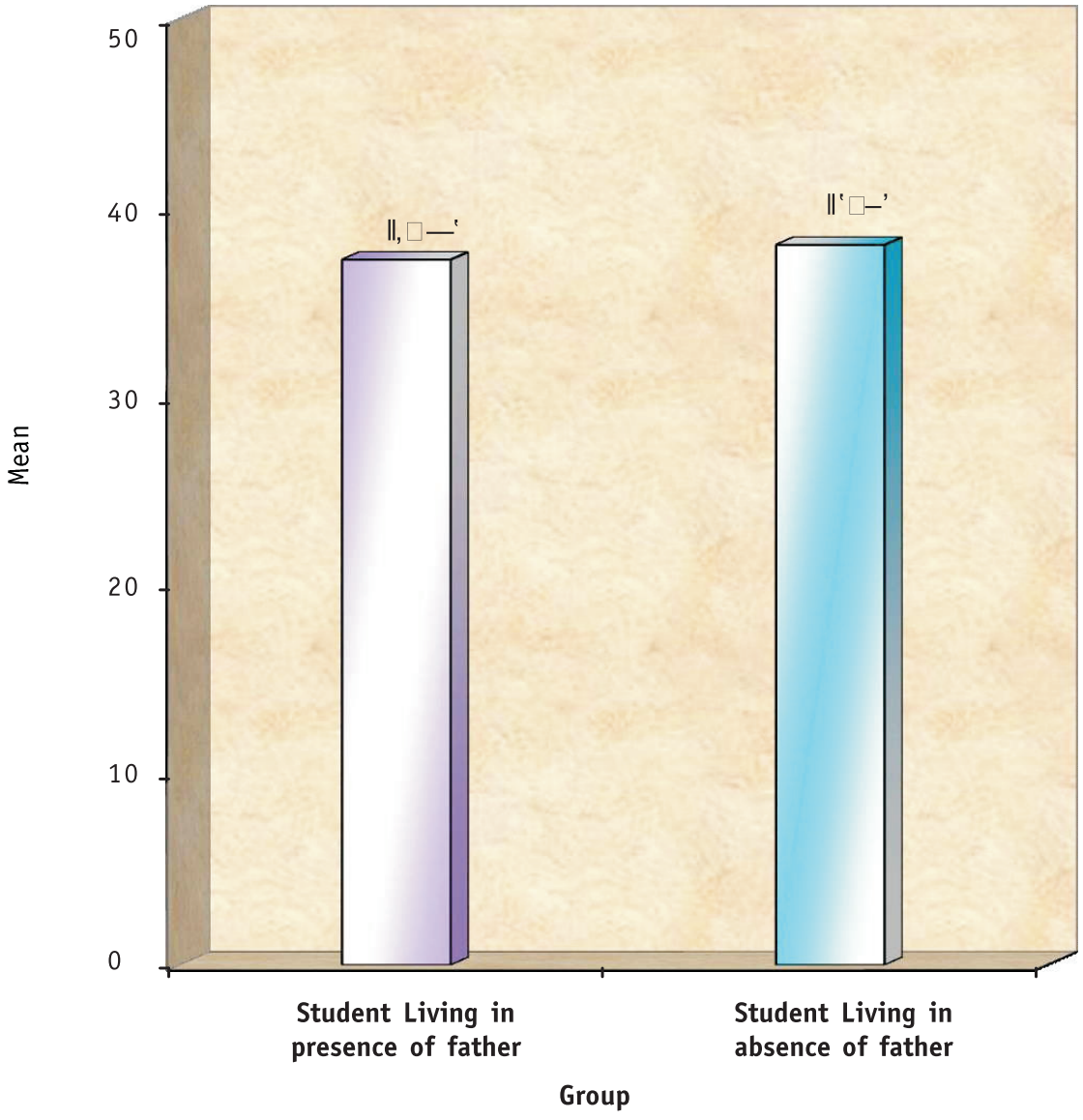

The second objective was to compare the mean scores of adjustment level of adolescent boys living in the presence and absence of father. The data were analyzed with the help of t-test and the hypothesis was tested and the results are given in table 2.

TABLE 2

Parent wise Number, Mean, Standard Deviation and T- Value of Adjustment Level of Adolescent Boys Living in the Presence and Absence of Father

Boys	N	Mean	S.D.	t- value	Remark
Living in presence of father	25	37.96	4.08	0.32	Not
Living in absence of father	25	37.56	4.81		Significant

Degree of Freedom- 48

Minimum value at 0.50 level - 1.68

Minimum value at 0.01 level - 2.42

From table 2 it can be seen that t-value is 0.32 which is not significant. It shows that the mean score of adjustment level of boys living in the presence and absence of father does not differ significantly, Thus, the Null Hypothesis that, "there is no significant difference in mean scores of adjustment level of adolescent boys living in the presence and absence of father," is not rejected. It may, therefore, said that boys living in the presence and absence of father were found to have same adjustment level to some extent.

Graph No. 02

Graphical Presentation of Parent Wise Mean Difference of Adjustment Level of Adolescent Boys Living in the Presence and Absence of Father (Reference Table no. 9.2)

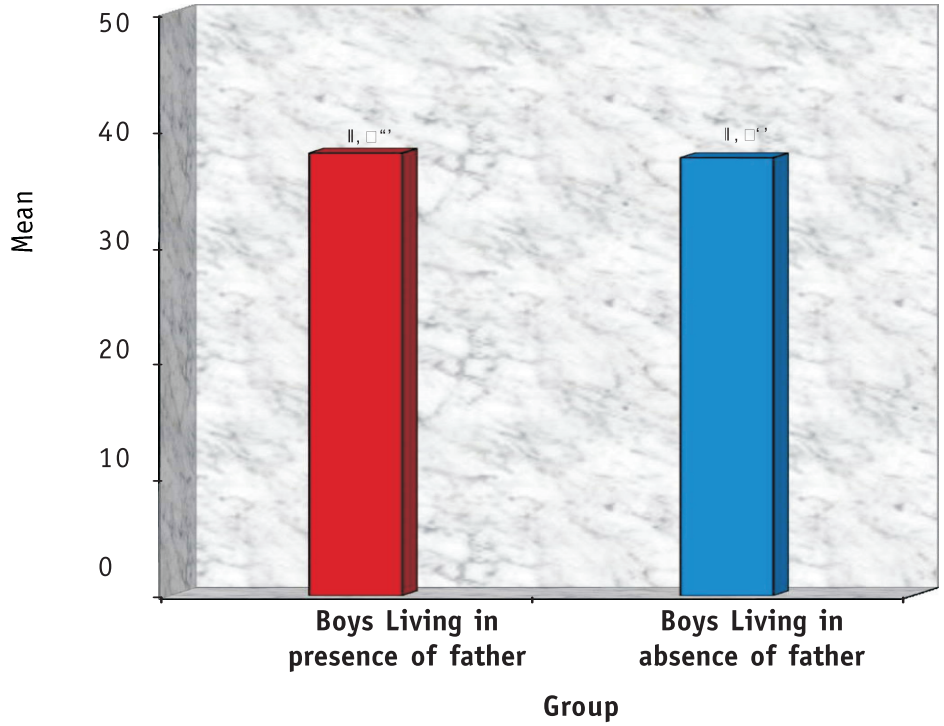

The objective was to compare the mean scores of adjustment level of adolescent girls living in the presence and absence of father. The data were analyzed with the help of t-test and the hypothesis was tested and the results are given in table 3.

TABLE 3

Parent wise Number, Mean, Standard Deviation and T- Value of Adjustment Level of Adolescent Girls Living in the Presence and Absence of Father

Girls	N	Mean	S.D.	t- value	Remark
Living in presence of father	25	36.6	5.68	1.38	Not
Living in absence of father	25	38.56	4.24		Significant

Degree of Freedom- 48

Minimum value at 0.50 level - 1.68
Minimum value at 0.01 level - 2.42

From table 3 it can be seen that t-value is 1.38 which is not significant. It shows that the mean score of adjustment level of girls living in the presence and absence of father does not differ significantly, Thus, the Null Hypothesis that, "there is no significant difference in mean scores of adjustment level of adolescent girls living in the presence and absence of father," is not rejected. It may, therefore, said that girls living in the presence and absence of father were found to have same adjustment level to some extent.

Graph No. 03

Graphical Presentation of Parent Wise Mean Difference of Adjustment Level of Adolescent Girls Living in the Presence and Absence of Father (Reference Table no. 9.3)

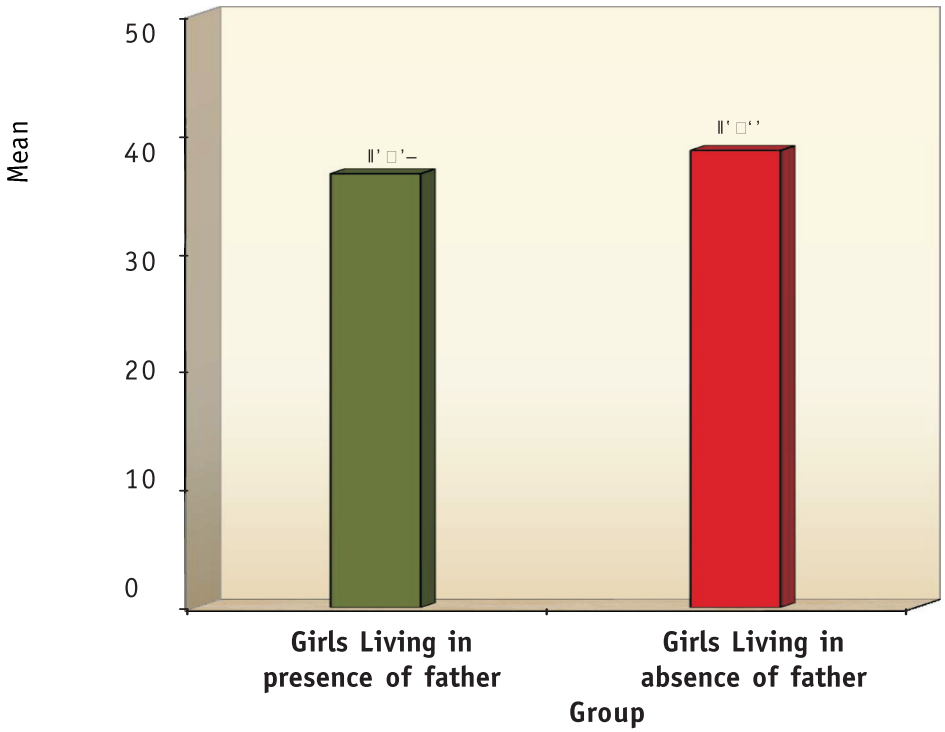

10. Findings

The first hypothesis which states that "there is no significant difference in adjustment of adolescent students living in their father's presence and absence," was found not significant. Thus, the null hypothesis was rejected but Dr. Subhash Sarkar (2017), Kaushik Bhakta (2016), Anchal Agarwall, Nikita Kaul, Dr. Nidhi Gandhi (2015) found significant, which is inconsistent from this study. According to their study the adjustment level of adolescent students living in the presence and absence of father differ significantly. Thus, the claim that students who are living in the presence of father have good adjustment level, is quite confusing. According to this study either the adolescent students living in the presence and absence of their father have no difference in adjustment level both can adjusted equally.

The second hypothesis which states that "there is no significant difference in adjustment level of boys living in the presence and absence of father," was found not significant. Thus, the null hypothesis was rejected the result of this study is consistent with the findings of Prem Shankar Shrivastava (2018), Linda R Stanley Maria Linora G Comello (2000) as according to their study adolescent adjustment level living in the presence and absence of father is more or less the same. Considering the findings of this hypothesis it becomes evident that adjustment level of adolescent boys living in the absence of father can also be similar to those who are living in the presence of father. The reason may be technology, at present due to advance technology though father residing at different place due to job work can also be in touch with their children.

The third hypothesis which states that "there is no significant difference in adjustment level of girls living in the presence and absence of father," was found not significant. It reveals that father's presence and absence has no impact on adjustment level of girls. It implies that both girls living in the presence of father and in absence of father have more-or-less same adjustment level. The researcher finds the same hypothesis, as this study. Mean score of this study shows that girls living in absence of father have good adjustment level than those who are living in absence of their father. This is consistent with the finding of Jelani Mandara, Carolyn B. Murray and Toya N Joyner (2005) who found that "lower income, father absent girls are found to be more adjusting than the high income father present girls."

Hence, keeping in view these problems of adjustment among adolescent students living in the presence and absence of father the researchers need to forward there research on adolescent students adjustment level. Then only we would come to know about the difficulties of adolescent students living in the presence and absence of father and they can be dealt with in a more effective and healthier manner.

11. Conclusion

In India fathers are deemed to be providers of protection and support for child's development. Most of the people are of the view that in presence of father the adolescent feels more secure and develops more confidence rather than in absence of father. Due to rapid social change at present there are number of families where children are growing up without a father residing in the home. So to identify the effect of the problem related with the adjustment among the adolescent students living in the presence and absence of father the present study was conducted.

In different studies there the researches was conducted on the topic "Adolescent adjustments living in presence and absence of father." It was concluded that there was good adjustment level

among students who were living in the presence of their father but in this comparative study researcher found out that there was no significant difference in adjustment level between the adolescent students living in the presence and absence of father. The result was consistent with the findings of Prem Shankar Shrivastava (2018), Linda R Stanley Maria Leonora G Comello (2000) as according to their study it can be concluded that there is no significant difference between adjustment level of adolescent students living in the presence and absence of father.

This study is in contradiction with the findings of Dr. Subhash Sarkar (2017) and Kaushik Bhakta (2016) Anchal Agarwall, Nikita Kaul, Dr.Nidhi Gandhi, (2015), who stated that adolescents adjustment level living in the presence of father is better than living in absence of father. So considering the findings it can be concluded that difference may be due to smaller sample size and father's outstation jobs and father's resides in rural areas were only considered as absence of father.

Though overall the result of current study shows no significant difference but mean scores in table 9.1 show students living in absence of father and table 9.3 show girls living in absence of father have good adjustment level than those who are living in presence of father. It may be due to the fact that student living in absence of father have to take their decisions independently and have to mould themselves according to the situations.

12 Suggestions

1. The students must understand and learn to accept the consequences- both positive and negative.
2. They must pay need to the instructions and suggestions of their parents, teachers and elders.
3. To give students various experiences to face challenges of the world.
4. To teach skills of life and bring a positive change in the development for the better adjustment level.
5. Institute should plays a vital role in the holistic development of the child.
6. Parents can help their children to be positive, healthy and good life-long learners.
7. In case of fathers' absence due to their outstation job and residence being in rural areas they should be consistently in touch with their children so that they do not feel the lack of necessary love, support and guidance of the father.

13. Educational Implementation

In a class room atmosphere the teacher can encourage the students to improve the adjustment level of the students.

A technique of group discussion can be organized as the class room activity.

Various programs like national cadet corps, cultural activities will help the students to improve their adjustment level.

The good relationship between the teacher and the student will enhance the adjustment level of the students.

Present study exhibits the adjustment among adolescents in the terms of healthy physique, intellectual ability and emotional poise, participation in school groups. Therefore the outcome of the

present study is that there should be active involvement of parents teachers and significant members of the society with the task of behavioral improvement of the child by cooperation, sympathetic attitude, encouragement and motivation. The present study can help students in building a good character, interpersonal relationship in society and in better preparation and planning of future.

REFERENCE -

1. Agarwall Anchal, 2010; A Comparative Study of Adjustment between Absence of Father at Adolescent Level.
2. Bhakta Kaushik, 2016; Adjustment level of students and its relation within the presence of father and absence of father.
3. Brand Bethany L., 2004; College Student Adjustment : A Structural Equation Analysis of Mediational Effects of Father Absence.
4. Dr. Sarkar Subhash, 2017; A study on the adjustment and academic achievement of adolescent students presence and absence of father.

•••

Emerging Research Journal ISSN No. : 2456-2424 : June 2021, Volume-5, Issue-1 / Impact Factor = 3.01

EFFECTIVENESS OF TEACHING ATTITUDE TOWARDS TEACHING PROFESSION OF HIGHER SECONDARY SCHOOL TEACHERS

Mrs. Alka Middha*
Dr. Rashmi Singh**

Abstract

The present study aimed to investigate the effectiveness of teaching attitude towards teaching profession of higher secondary school teachers in Satna district of Madhya Pradesh. Attitude is an arrangement of mental process, a mental state, an internal disposition particular way.Student's effectiveness depends straightforwardly on the effectiveness of its teachers. So the teachers have to test their ideas with emotional content, important beliefs, prejudices, bi-ases and predisposition etc. on their teaching profession.

The study was conducted on a sample of 100 higher secondary teachers of 16schools in Satna district (M.P.) among them 50 were government teachers and 50 were private higher secondary school teachers. Further they were divided into categories male/ female, married / un-married, experience wise. The one-dimensional 52 items tools based on "Teachers attitudes scale towards teaching" standardized by Dr. Arti Anand, Prof. Harbans Singh and Dr. Vishal Sood was used. Perception scales provided a base to have four broad dimensions for attitude scale which were (1) Teachers professional behaviour.(2) school related aspect; (3) teacher community relationship and (4) teacher student relationship. . In order to study the nature of data, mean, standard deviation and critical ratio was used to found out the attitude of teachers towards teaching profession. Whereas t - test, was used to found out the significance of difference of attitude among higher secondary teachers based on different category, (government- private, male-female, married-unmarried). Comparative studies have been done between government, private and missionary school teachers, and experience wise,(less than 5 years, 5 to 10 years and more than 10 years)using one way anova.

Key words : *Teaching Attitude & teaching profession*

INTRODUCTION

Education is the process of facilitating learning, or the acquisition of knowledge, skills, values, morals, beliefs, and habits, the teacher forms the pillar of any education system and prevails a supreme place in the current society.

Teaching is one of the instruments of education and is a special function is to impart understanding and skill. The main function of teaching is to make learning effective. Teaching is a social and cultural process, which is planned in order to enable an individual to learn some-thing in his life. Changing times have added new dimensions to teaching profession, which requires specified competencies and right attitude towards teaching.

***M.Ed. Student, Jabalpur Public College, Jabalpur, (M.P.)**
****Associate Professor, Jabalpur Public College, Jabalpur, (M.P.)**

When focusing on students' perceptions of learning, studies have pointed to different defining elements related to such processes. An extensive body of extant research examines the importance of teacher-student relations. Students who consider their teachers to be caring are likely to internalize pro-social goals at school, and this correlation improves students' en-gagement in academic activities.

IMPORTANCE OF SECONDARY EDUCATION

Education in India is primarily provided by public schools (controlled and funded by the government at three levels: central, state and local) and schools. At the primary and secondary level, India has a large private school system complementing the government run schools, with 29% of students receiving private education in the 6 to 14 years age group.

Secondary education in India is examination- oriented and not course - based: World Most reputable universities in India require students to pass college-administered admissions tests in addition to passing a final secondary school examination for entry into a college or univer-sity. School grades are usually not sufficient for college admissions in India.

According to some research, private schools often provide superior results at a multiple of the unit cost of government schools. The reason being high aims and better vision. However, others have suggested that private schools fail to provide education to the poorest families, a selective being only a fifth of the schools and have in the past ignored but the Court orders for their regulation. In their favour, it has been pointed out that private schools cover the en-tire curriculum and offer extra-curricular activities such as science fairs, general knowledge, sports, music and drama.etc...

There is one common thing that differentiate the education in government and private schools is teacher and the teaching attitude.

TEACHER'S ATTITUDE

Behaviours, attitude, and interest of teacher help in shaping the personality of the student. Teachers differ greatly in their attitude and differ in their methods to supply the pupil's defi-ciencies.

Attitude is a noun, and it means 'a way of thinking a way in which body is held and in formal sense self-confident or aggressive behaviour' in simple words attitude is one's inclination something inside the person and may be favourable or unfavourable towards a particular thing or object. Therefore' it is supposed that a teacher with a favourable attitude towards his/her profession would produce right type of youths.

People's attitude towards their profession influences their performance. This cause is also valid for the profession of teaching. Teacher's attitude is significantly related to pupil's achievement. This indicates that favourable attitude towards teaching is essentials to have better performance in schools. Teacher is an important vehicle to improve the quality of school education. The revitalization and strengthening of the teacher are, therefore, a powerful means for the upliftment of education standards in the country.

It has been rightly said by an educationist Saraf (1996) that" there can be muddy teaching in marble halls and marvellous teaching in muddy walls". The Teacher in school is the one who makes or change student's personality through his teaching. Student's effectiveness depends straightforwardly on the effectiveness of its teachers. The powerful Teacher is the instructive pioneer and leader who straightforwardly influences and in a roundabout way impacts the understudies.

Shahla Shabeeh Shaheen (2015), emphasized on difference of attitude of secondary school teachers of early adult hood teachers and late adulthood stage. She found that teachers be-longing to early adulthood stage had better attitude towards teaching profession than teachers belonging to late adulthood stage. Dr Kamlesh Dhull (2017) found significant difference in teaching attitudes according to their gender (male- female), job satisfaction

Presently, it has been noticed that teacher's attitude towards teaching is changing and therefore its adverse effect has been shown to students. Positive attitude makes the career of stu-dents. They easily achieve their goals, but negative attitudes take them below their dignity. Some teachers are interested to take tuitions despite teaching in school and the effect on stu-dents that they also do not want to study in school but to study in tuition classes.

This shows the attitude of teachers especially secondary school teachers who want to earn money indirectly effects student's careers. The effective attitude and actions employed by teachers ultimately can make a positive difference on the lives of their students, and this be-lief will serve as the central focus of this paper.

Teacher attitudes towards teaching profession is the influencing factor on the students. Hence it is needed to know the effectiveness of teaching attitude of higher secondary teachers to-wards teaching profession

OBJECTIVE OF STUDY

1. To study the attitude of higher secondary teachers towards teaching profession in relation to nature of school.
2. To study the attitude of government higher secondary school teachers towards teaching profession in relation to their gender.
3. To study the attitude of higher secondary private school teachers towards teaching profes-sion in relation to their gender.
4. To study the difference in the attitude of higher secondary teachers towards teaching profession under the three categories of teachers, (Government, Private, and Missionaries).
5. To study the difference in the attitude of higher secondary school teachers towards teach-ing profession in relation to their years of experience in teaching.

HYPOTHESES:

In order to achieve the objectives of the study the following hypotheses were framed

- There is no significant difference in the attitude of higher secondary school teachers towards teaching profession in relation to nature of school.
- There is no significant difference in the attitude of government higher secondary school teachers in relation to their gender.
- There is no significant difference in the attitude of higher secondary private school teachers in relation to their gender.
- There is no significant difference in the attitude of higher secondary teachers towards teaching profession under the three categories of teachers, (Government, Private, and Missionaries).

- There is no significant difference of attitude of higher secondary school teachers towards teaching profession in relation to their years of experience in teaching.

METHODODOLOGY -

The technique taken up for the research study was questionnaire survey method and result was calculated statistically.

TOOLS

To access the effectiveness of teaching attitude towards teaching profession of higher

Secondary school teachers, the teacher's attitude inventory developed byDr. Arti Anand, Prof. Harbans Singh and Dr. Vishal Sood,has been used.

SAMPLE SIZE

The study was conducted on 100 secondary school teachers out of which 50 gov-ernment and 50 private teachers of Satna (M.P.) From 16 selected schools as sample. It was further divided into 25 male teachers and 25 female teachers. Further the sam-ple divided into 32 government, 32 private and 32 missionary teachers to do a com-parative study between the attitudes of teachers. And a comparative study had been done according to experience of years of teaching. There were three groups of teach-ers whose experience of teaching is below 5 years, 5 to 10 years and above 10 years.

Scoring

The scale which was to measure attitude was a self - administering and self -to report-ing five point scale, strongly agree, agree, undecided, disagree, and strongly disagree. The items were scored in such a manner that if the answer to apositive item was strongly agree, a score of 5 was given,' to agree' a score of 4 was given for in decided option, a score of 3, for disagree option, a score of 2 and for strongly disagree a score of 1 was awarded, on the other hand, in case of negative items the above scoring procedure was completely reversed. The sum of scores on all statements of the scale is considered as respondent's total attitude score. The score on the scale was range from 52 to 260. The higher the score reflected favorable attitude and vice- versa.

Data analysis

To test the hypotheses and interpret the data, Mean, Standard deviation- test and Anova were used to analysis the result statistically

TABLE 1

Nature of school wise, Mean, Standard deviation and t - value of attitude) of higher second-ary teachers towards teaching profession

TYPE OF SCHOOL	N	Mean	S.D.	t- value	Remark
GOVERNMENT	50	205.35	19.07	1.76*	P< 0.05
PRIVATE	50	198.8	14.63		

df 98

Analysis : From table 1, it can be seen that, there is significant difference in attitude towards

teaching profession between government and private higher secondary teachers at 0.05 level of significance.

TABLE 2

Gender Wise, Mean, Standard deviation and t - value of attitude of higher secondary government school teachers towards teaching profession

Gender	N	Mean	S.D.	t- value	Remark
Male	25	193.76	14.38	3.38**	P< 0.01
Female	25	205.68	10.26		

df 48

Analysis : From table 2, it can be seen that, there is significant difference among higher secondary government male and female school teachers at 0.01 level of significance.

TABLE 3

Gender Wise, Mean, Standard deviation and t - value of attitude of higher secondary private teachers towards teaching profession.

Gender	N	Mean	S.D.	t- value	Remark
Male	25	201	22.59	1.26	NOT
Female	25	280	17.06		SIGNIFICANT

df 48

Analysis : From table 3, it can been seen that, there is no significant difference in attitude towards teaching profession between private male and female teachers.

TABLE 4

Comparison of mean scores of attitude of higher secondary school teachers under three categories of higher secondary school teachers, (government, private, and missionaries)

Source of varia-tion	df	MSS	SS (Sum of squares)	F	REMARK
BETWEEN THE SAMPLES	2	1783.34	3566.69		
WITHIN THE SAMPLE	93	490.99	45662.64	3.63*	P < 0.05
TOTAL	95	518.20	49299.33		

Analysis : Table 4, indicates that,there is a significant difference in attitude towards teaching profession between government, private and missionary teachers.

TABLE 5

Experience wise comparison of mean scores of attitude of higher secondary teachers under three categoriesless than five years / between 5 to 10 years/more than 10 years.

Source of varia-tion	df	MSS	SS (Sum of squares)	F	REMARK
Between the groups	2	166.60	333.19	0.50	NOT SIGNIFICANT
Within the groups	93	329.73	30664.72		
Total	95	326.29	30997.91		

Analysis : From table 5, it can been seen that, there is no significant difference in the attitude towards teaching profession according to their experiences of teaching.

DISCUSSION

Studies reviewed on attitude towards teaching reveal that attitude towards teaching profession are a significant predictor of teaching efficiency. Some studies indicate that female teachers possess a high degree of attitude than male teachers and teacher with positive attitude tend to encourage their students.

The analysis of data of present study depicts that attitude towards teaching profession of higher secondary government teachers (male & female) show significant difference (Table 2). The analysis of present studies found that government male and female teachers have significant difference between attitudes towards teaching profession (Table 2).However private male and female teachers do not show significant difference (table 3)

Aslan (2009) emphasized that the majority of teachers have adopted the positive attitudes towards their profession, in this present study also researcher found that , there is significant differences between the teacher's attitude of government, private and missionary school teachers towards teaching profession (table 4) Dr. Kamlesh Dhull (2017) in his study emphasized that attitudes towards teaching profession and success in teaching are correlated to each other, and found there is significant difference in teaching attitudes of male and female secondary teachers.

Conclusion

Teaching is interpersonal influence aimed at changing the behaviour potential of another person and teaching profession is one of the imperative skill.

Changing times have added new dimensions to teaching profession, which requires specified competencies and right attitude towards teaching. It has been found that positive associations between teaching quality and better behavioural and emotional engagement among students, reaffirming the view that despite not having an exclusive role in influencing students' engagement, quality teaching plays an important part... Present studies revels that experiences, marital status, gender does not effect on the attitude of higher secondary teachers towards teaching profession. And it has been found that government teacher's attitude was more favourable than private teachers and there is significant difference between attitude of govt/ private / missionary teachers. So this studies is beneficial for those parents who think that private schools are better than government school. This study will also help to implement RTE act, thus a positive attitude towards teaching profession will improve in the society.

•••

Teacher-Educator's Attitude Towards e-Learning

Mrs. Reena Sachan*
Dr. Nevedita Paul**

Abstract

e-learning is an extremely adaptable technology that can be used for delivery, interaction and facilitation of both teaching and learning process. It makes new knowledge and skills available immediately and reduces the learning time required to master even the most complicated topics. e-learning is the changing trend of education. The modern technologies particularly the internet, made education no longer limited to the four walls of the classroom. Measuring attitude of teacher-educators towards e-learning is very much essential to measure the effect of any change through technology. To assess teacher-educators' attitude towards e-learning a scale by Dr S. Rajasekar was given to 80 teacher-educators of Government and Non-Government B.Ed. colleges of Jabalpur. The findings of this study reveal that the teacher-educators have a favourable attitude towards e-learning as well as teacher-educators who are familiar with computer and information and communication technology differ in their attitude towards e-learning when compared to the teacher-educators who are not familiar with technology. Attitude plays a vital role in using technology as a strong tool for a positive change. There must be programmes at educational institutions which could focus on developing a positive attitude among teacher-educators towards e-learning of different institutions.

Keywords *- Teacher Educators and attitude towards e-Learning*

INTRODUCTION

The modern Information and Communication technologies are technological tools and resources used to communicate, and to create, disseminate, store and manage information. Information and Communication Technology (ICT) enables self-paced learning to help all students to achieve high academic standards. Since the quality and efficiency of education depends to a great extent on the quality of teachers. Only quality teachers opt for change or innovation in their teaching aspect through integrating technology to give the best to student-teachers.

Technology is a powerful tool for problem-solving, conceptual development and critical thinking which helps to make the learning process much easier for the B.Ed. Students. Therefore for Educational Institutions it is necessary to undertake innovative programmes for Teacher-Educators' to update and upgrade their teaching competencies to facilitate the teaching process effectively. E-education involves e-teaching and e-learning along with the various administrative and strategic measures needed to support teaching and learning in an Internet environment. It will incorporate a local, regional, national and international view of education. e-learning technologies cannot be used effectively without the full support of those who will use them (e.g., faculty and staff). It is however, noted that teacher-educators are reluctant to use e-learning tools and they stick to the traditional face-to-

***Research Scholar, Jabalpur Public College, Jabalpur, (M.P.)**
**** Professor, Jabalpur Public College, Jabalpur, (M.P.)**

face teaching methodology and tools. Teachers must transition away from traditional methods of teaching, towards a more constructivist pedagogy that will enable students to derive full benefit from e-learning. e-learning makes new knowledge and skills available immediately and reduces the learning time required to master even the most complicated topics. e-learning is the new wave in learning strategy. Through innovative use of modern technology, e-learning not only revolutionizes education and makes it more accessible, it also brings formidable challenges for instructors and learners. New generation teachers who will work in an Internet environment in both regular and virtual classroom situations will build new concepts of working in time and space. e-teachers collaborate, build and discover new learning communities and explore resources as they interact with information, materials and ideas with their students and colleagues.

NEED AND IMPORTANCE OF RESEARCH WORK

Education in the digital world of today can actually make that meaningful shift by ensuring that if students do not learn the way they are taught, they can be taught the way they learn. The trend of using e-learning as learning and teaching tool is now rapidly expanding into education. Many educators and researchers had high hopes for e-learning, believing that it would provide more access to information and communication, and would ultimately lead to a new revolution in education.

Educational processes have undergone many of changes during the last century. From print learning materials mailed to students' homes, to educational radio broadcasts, to educational television programming, to recent forays in interactive Web-based e-learning, ongoing technological changes have been reflected in the evolving role of teachers and students in the learning equation.

Technological changes - particularly Web-based e-learning technologies - have resulted in new curriculum design and teaching strategies, new and emerging organizational structures, and it has even transformed learning itself. Innovations in teaching and learning have emerged, and educators are in the midst of becoming more adept at using new educational technologies. This fact is reflected in our changing language. Terms such as "open education," "distance education," "distance learning," "virtual learning," "remote learning," "online learning," and "e-learning" are now part of educators' everyday lexicon. Use of such terminology helps to define and shape the creative innovations taking place.

OBJECTIVES OF RESEARCH WORK

"Research objectives are the specific components of the research problem that you'll be working to answer or complete in order to answer the overall research problem". Churshill(2001)

Objectives give direction to any research work. It shows that result should to be sought and segregated. Objectives are an intended goal that prescribe definite scope and suggests direction to the research. This direction provides the foundation for the appropriate plans to accomplish the goals. Objectives help the research to know whether the action currently being taken is actually contributing to the accomplishment of the goals or not. The specific expected result which is based on the specific objectives is the standards of performance against which the research is praised.

(i) To study the attitude of teacher-educators from Government and Non-Government Colleges towards e-learning.

(ii) To study the attitude of teacher-educators from Government Colleges towards e-learning with reference to their gender.

(iii) To study the attitude of teacher-educators from Non-Government Colleges towards e-learning with reference to their gender.

(iv) To study the attitude of male teacher-educators from Government and Non-Government Colleges towards e-learning.

(v) To study the attitude of female teacher-educators from Government and Non-Government Colleges towards e-learning.

VARIABLE

A variable is a concept that can vary in characteristic or situation that the researcher manipulates and controls. Variables are those attributes of objectives, events, things and beings which can be measured.

Dependent variable - Teacher-Educators

Teacher-Educators are the teachers who teach and prepare future teachers. They are the people who can help to implement the change and willing to see learning in a much broader context.

Independent variable- e-learning or Electronic learning

Electronic learning or e-learning is an all-encompassing term generally used to refer to computer enhanced learning, although it is often extended to include the use of mobile technologies such as PDAs and MP3 players.

HYPOTHESIS

"A Hypothesis is a shrewd guess or a tentative solution or an inference or sub position to be tested by empirical evidence." - John W. Best1

Following hypothesis have been formulated for the present research work :

1. There exists no significant difference in the attitude of teacher-educators from Government and Non-Government Colleges towards e-learning.
2. There exists no significant difference in the attitude of teacher-educators from Government colleges towards e-learning with reference to their gender.
3. There exists no significant difference in the attitude of teacher-educators from Non-Government colleges towards e-learning with reference to their gender.
4. There exists no significant difference in the attitude of male teacher-educators from Government and Non-Government colleges towards e-learning.
5. There exists no significant difference in the attitude of female teacher-educators from Government and Non-Government colleges towards e-learning.

RESEARCH METHOD

The research methodology is the most important aspect for which a plan is constructed.It is a system plan which belongs to focus the preliminary planning that will be needed to accomplish the purpose of the study. The researcher will use the survey method for the current research work.

RESEARCH TOOL

For the present study, tool that has been used is : Attitude towards using new technology by Dr S. Rajasekar. This scale consists of 30 statements and it provides five columns bearing the

headings strongly agree, agree, undecided, disagree and strongly disagree, against the statements.

Scoring Procedure : The scale has as many as 13 favourable (positive items) and 17 unfavourable statements(negative items).An individual score is the sum of the scores of the 30 items.The score ranges from 30 to 140.Higher score indicates the favourable attitude towards using new technology in teaching.

SAMPLE

For the proposed research following sample in tabular form is taken into consideration:

TYPE OF COLLEGE	MALE TEACHER-EDUCATOR	FEMALE TEACHER-EDUCATOR	TOTAL
GOVT.	20	20	40
PRIVATE	20	20	40
TOTAL	40	40	80

STATISTICAL METHOD

In the present research work, following statistical methods are to be used for analysis of data:

a) Mean

b) Standard Deviation

c) Critical Ratio

d)

CONCLUSION AND ANALYSIS OF RESULTS

The following conclusions have been drawn for the present research on the basis of hypothesis formed:-

1. There is significant difference in the teacher-educators' attitude towards e-learning as the C.R. value is more and statistically significant even at 0.01 level of confidence.
2. There is significant difference in the attitude of male and female teacher-educators from Government colleges towards e-learning as the C.R. value is more and statistically significant even at 0.01 level of confidence.
3. There is no significant difference in the attitude of male and female teacher-educators from Non-Government colleges towards e-learning as the C.R. value is less and not statistically significant at 0.05 level of confidence.
4. There is no significant difference in the attitude of male teacher-educators from Government and Non-Government colleges towards e-learning as the C.R. value is less and not statistically significant at 0.05 level of confidence.
5. There is significant difference in the attitude of female teacher-educators from Government and Non-Government colleges towards e-learning as the C.R. value is more and statistically significant even at 0.01 level of confidence.

EDUCATIONAL IMPLICATIONS AND SUGGESTIONS

1. It contributes a new teaching-learning in the form of assessing the level of knowledge and attitude towards e-learning in the classroom instruction.
2. It is very much essential for the development of teacher-educators interest, attitude, knowledge, motivation towards e-learning.
3. Teacher educational institutions should provide teacher educators with in-service trainings, workshops and seminars on e-Learning so as the teacher educator becomes useful resource persons to provide e-education mediated teacher education.
4. Education systems should provide in-service and pre-service training to teachers in computer assisted instruction and computer managed instruction in education.
5. Certificate course to the student teachers to focus on e-Learning experience as the initial stage of pre service training can be provided.
6. Design e-Learning based instructional material to facilitate online teaching and learning.
7. The professional development policies and the teacher training policies should support the e-Learning based teaching so, that the teachers and the students are involved in the active teaching learning process.

BIBLIOGRAPHY

- http://iijrae.com/volumes/vol3/iss12/16.DCAESP91.PDF/10.55p.m./17-3-19
- http://gangainstituteofeducation.com/newdocs/8.10p.m./21-3-19
- http://granthaalayah.com/Articles/Vol4ss5/02_IJRG16_SE05_02/1.00p.m./10-3-19
- http://www.mierjs.in/ojs/index.php/mjestp/article/download/36/35a/4p.m./17-3-2019
- Bhatnagar S., Saxena A. (2005) ' Advanced Educational Psychology', R. Lall Book Depot, Meerut, pg 474.
- Chandra S. Soti, Sharma K., Rajendra (2010), 'Research Education', Atlantic Publishers, Delhi 2010; pg 80-59, 114-129, 318-327.
- Kulshreshtha Dr. S.P.(2001) 'Educational Psychology', R. Lall Book Depot, Meerut, Fifth Revised Edition 2001; pg 88-89.
- Mangal S.K. (2012) 'Educational Psychology', PHI Learning Delhi, First Edition (2012)
- N.R. Swaroop (2008) 'Philosophical and Sociological Foundation of Education', , R. Lall Book Depot, Meerut.
- Robbins S.P. Sanghi S. (2012) 'Organizational Behavior', Laico Publishing House, Mumbai, Fourteenth Edition (2012)
- Awais, Bilal, Usman M., Waqas M., Sehrish (2011), "Impact of Internet Usage on Students' Academic Performance", uh/233226triplea.wikispaces.con9191411/ Impact-of- Internet-Usage-on-Students'-Academic-Performance
- Basu Sarah(2010), "Internet Usage Pattern Among College Teachers", 40 Years of Publication, Psycho-Lingua 2010, Bhargav Publishing House, Agra, Vol.40(1 and 2), 173-176

•••

Environmental Impact Assessment of Tribal Area's In Dindori District

Mr. Vikas Jain*

Abstract

Environmental Impact Assessment (EIA) essentially means assessment of the changes in the environmental resources of values remitted from the Dindori. This involves systematic identification and evaluation of short term as well as long-term potential impacts/effects of Dindori related to the physical, biological, cultural, and socio-economic aspects of the environment in its totality. Based on the identified impacts through above studies, Environmental Management Plan (EMP) is to be prepared. EMP provide mitigative measures to overcome/minimize the adverse environmental affects/impacts on aforesaid parameters of baseline conditions with prescribed time fame of implementation along with technical and monitoring inputs as per the guideline provided by Ministry of Environment and Forests, Govt. of India, for the purpose.

INTRODUCTION

Wildlife conservation is the practice of protecting wild species and their habitats in order to prevent species from going extinct. Major threats to wildlife include habitat destruction/degradation/ fragmentation, over exploitation, poaching, hunting, pollution and climate change. Wildlife conservation is the practice of protecting wild species and their habitats in order to prevent species from going extinct. Major threats to wildlife include habitat destruction/degradation/fragmentation, overexploitation, poaching, hunting, pollution and climate change.

HYPOTHESIS

Based on the information received from the Dindori a detailed work plan to carry out studies on flora and fauna within the Dindori site is submitted as under.

(i) With the help of maps/toposheets of the impact zone, depending upon varied landforms, the total impact area (314 sq km) will be delineated in five sub-impact zones based on the area falling within various distances (radius) from Dindori site as under:

0-1 km sub-impact zone,

1-3 km sub-impact zone

3-5 km sub-impact zone,

5-7 km sub-impact zone and

7-10 kmsub-impactzone. Stratification of the area such as, forest area, agriculture land, habitation site, wastelands, river, nala etc. will be demarcated on map to find out the total area of various land categories existing in the impact zones. Each category of landform will be surveyed for the inven-

***Head, Department of Botany, Mekalsuta College, Dindori, (M.P.)**

tory of flora and fauna within the area.

However, the forest land will be surveyed as per the guidelines of the forest working plans for assessment of structure, regeneration status, important forest resources, NTFPs, RET species, endemic species etc. Secondary data/information as and when required will be collected from concerned departments. A detailed sampling area proposed to be undertaken for survey of various components is given in Table-1.

Table 1:

Showing various sub-impact zones and its area with number of plots to be laid in each zone.

S. No.	Impact Zone	Area of each Zone (In sq km)	Sampling percent	Sampling area	No. of plots to be laid (size:1000 sq.m)
1	0-1 km	3.14	5 %	0.157 sq km or 15.7 ha	157
2	1-3 km	25.12	3 %	0.7536 sq km or 75.36 ha	754
3	3-5 km	50.88	1%	0.508 sq km or 50.8 ha	508
4	5-7 km	75.36	1%	0.7536 sq km or 75.36 ha	754
5	7-10 km	160.14	0.5%	0.807 sq km or 80.7 ha	807
Total	**5 zones**	**314.64 sq km**	**10.5%**	**2.98 sq km or 297.92 ha**	**2986 Nos.**

Research Methodology:

1. Sampling design:

For the systematic assessment of flora and fauna and impact of proposed Dindori a line transect method will be adopted. For this purpose, line transects will be laid out at 10° interval from the centre point of Dindori site within the 10 km radius by covering 360 ° in the circle. Thus, thirty six such line transects of 10 km length will be laid out. However, each sub-impact zone would be considered as the observation block and depending upon the intensity of sampling area as shown in the Table-1 estimated plots would be laid out. Thus, interval of the plots would be varied in different observation block (impact zones), which can be decided by plotting plot points on the map.

2. Floral & Faunal Study:

(1) Assessment of tree vegetation

Qualitative and quantitative assessment of forest vegetation will be done by adopting standard ecological methods. For evaluation of community structure in various impact zones, area of 1000 sq m (50m x 20m) would be considered as sampling unit. However, sampling intensity would be varying in various impact zone depending on the intensity of impact from proposed Dindori activities. Sub-impact zone of 0-1 km have been considered as high impact zone thus, 5 % of the total area of this zone i.e. 15.7 ha will be taken up for assessment by laying out 157 plots. Similarly, 3 % area of sub-impact zone 1-3 km, 1 % area of each of 3-5 km and 5-7 km sub-impact zones, and 0.5% area of distant sub-impact zone (7-10 km), which will provide sampling area of 75.36 ha, 50.8 ha, 75.36 ha and 80.7 ha respec-

tively for assessment of floral and faunal studies (Table: 1). Total number of plots 2971 is proposed to be laid out by covering 10.5% of the area coming under 10 km radius in Dindori. Each sub-impact zones will be considered as observation block for documentation and assessment of impact.

Vegetational spectrum of various sub-impact zones will be observed by collecting data on the canopy cover and the tree species present (all the woody species > 20 cm GBH (Girth at breast height)). All species encountered in the plot will be enumerated species wise. Recorded data will be analyzed to work out frequency (%), density (No./ha) and basal area (m2/ha) of tree species. Importance Value Index and Diversity Index also be calculated following standard ecological methods.

(2) Regeneration status of forest

Population structure of forest ecosystem is characterized by recruitment pattern which in turn depends upon presence of adequate number of saplings and seedlings. Virtually, growth of the plants also denotes the future of the forest. Moreover, this stratum of forest ecosystem plays a very vital role for wild animals by providing browsable layer as well as shelter. Observations on saplings, as well as availability of shrub species (species > 50 cm in height and < 20 cm GBH will be treated as shrubs) will be made by laying out 3 sub-plots of 10 m x 10 m size in each 1000 sq m plots. Thus, for the present study density of saplings of encountered tree species and their distribution will be recorded.

(3) Enumeration of ground vegetation

Assessment of ground vegetation and seedlings of tree species growing in the area will be carried out by laying out 5 small plots of 1 m x 1 m size in each sub-plot of 10 m x 10 m. Thus, for the purpose, 15 small plots (1m x 1m) will be laid out in each sub-plot.

Analytical characters viz, density, frequency, cover and abundance of all floral components will be analyzed as per the method suggested by Curtis and Mc-Intosh, (1950). The relative values of frequency, density and dominance would be determined and would be used for getting importance Value Index (IVI) of individual species to understand logical arrangements of communities of the Dindori area. The species diversity of the existing communities of all sub-impact zones would be determined.

(4) Faunal study:

For inventory of fauna, standard techniques by using direct and indirect methods will be used to record their presence within the impact zone. To estimate the wildlife populations sustained in the area line transect method is the most popular and widely used for estimation of wildlife population. In this study estimation of major wild animals (herbivore and carnivore) population would be made in all 36 line transects, by covering all sub-impact zones. A circular plot will be used for assessment of animal presence and to understand their movement and habitat utilization pattern through indirect method. In each line transect, circular plot of 1 m radius will be laid out on either side at the interval of 200 m (50 plots in each transect) thus, total 1800 plots will be made in thirty six transects for estimation of wildlife population and their evidences.

Observations will be made round the year by covering all the three seasons i.e. rainy, winter and summer in all sub-impact zones (Observation block). In addition to the line transect method for ungulate population sampling; road census would also be employed to cover a wider study area and to get better population estimates. Apart from the direct observations of animals, indirect evidences like pug

marks, hoof marks, dung, scat, pellet groups, digging etc. are reliable indicators of animal's presence and habitat utilization by wild animals.

(5) Assessment of Habitat Utilization Pattern of Existing Wildlife.

Wildlife habitat mainly covers food, shelter and water holes, to assess the wildlife habitat quality vegetational and physical characteristics of the habitat i.e. topography of the area, presence of water holes etc. as factors which could account for ungulate preference or avoidance of an area by the virtue of their relationship. Thus, quantitative and qualitative values of habitat suitability of sustained wild animals would be obtained for the structural and floristic features of the habitat.

(6) Assessment of Biotic Pressure:

A direct correlation exists between the location of human settlement and the extent of biotic disturbances. To account for anthropogenic pressures on the habitat use by wild animals, distance to nearest human settlement (village, cattle camp, and labour camp) will be measured from each sample point. Distance to the nearest water source will also be measured from each sample plot.

(7) Habitat evaluation

The interacting system of wildlife habitat and possible impact of human actions do not allow the applicability of single method of evaluation of impact assessment. Assessment of environmental impact of developmental activities on wildlife and their habitat (if any) within the impact zone will be carried out by adopting standard methods like habitat suitability index (HSI), quantification of wilderness and more recent modeling approach will be applied for habitat evaluation in this study.

Variety of methods for wildlife habitat evaluation has been developed by different scientists to meet specific objectives in different field conditions. Some of these methods will be applied for habitat evaluation (De vas and Mosby, 1971). Wild life Institute of India (WII) has also made an attempt to modify some of the evaluation techniques which are compatible with Indian conditions, where human settlement and cattle camps invariably occur inside the protected areas. Some efforts have also been made by Sale and Berkmullar (1988), Berkmullar et.al (1990), Panwar et.al (1990) and Mathur (1991). In the present study, two approaches will be followed to evaluate wild life habitats. One deals with rapid assessment of the habitat characteristics and the other is Habitat Suitability Index Model approach.

(8) Avifauna/aquatic fauna:

Assessment of wildlife consisting of avi-fauna, and aquatic fauna will also be made in various sub-impact zones at the existing site. For this study, direct (ocular sighting) and indirect method (Signs, evidences etc.) will be adopted. All 36 line transects of Dindori site within the 10 km radius will be utilized for this purpose.

A check list of avi-fauna and aquatic fauna will be prepared through direct sighting as well as indirect method of inventory. This will help to identify the species of various categories of rare, endangered, migratory, domestic etc. found in the Dindori area.

(B) Wildlife Conservation Plan:

Wildlife habitat includes several interrelated concepts dealing with space, time and function. Forest is virtually a home of several major flora and fauna and consists of several habitats of sustained

biological diversity. A habitat is the sum total of environmental conditions of a specific place occupied by wild life population of various species. It is proposed to observe variability of species and their population with consideration of basic habitat elements, like food, cover, water, space and other structural characteristics and the quality of the habitat itself. Data collected on, vegetational spectrum, flora/fauna, avifauna, aquatic fauna, habitat evaluation and utilization etc. along with dominant biotic component of the habitats or physical variables will be used to quantify the quality of a habitat which will help to analyze the habitat quality for a single species or group of species sharing similar habitat. These observations will be used to determine species specific habitat requirement for making conservation plan.

Presence of wild animals and their population would be estimated from the data collected through direct and indirect methods within the various sub-impact zones of Dindori site. These primary data will be used to make wildlife conservation plan of sustained wildlife of the area. However, human and their bovine disturbances/movements, utilization pattern of habitats etc., will also be considered for delineation of wildlife conservation area. This plan will also envisage the time bond implementation and monitoring mechanisms of various identified parameters along with budgetary provisions.

Primary data on floral and faunal components will be used for preparation of wildlife conservation plan of the area. However, major components identified for the plan .

Prepare an inventory of major wild animals & their presence in the Dindori site.

- Prepare an inventory of the habitat parameters
- Assess the wildlife potential of the existing habitat
- Assess the level of human use within the Dindori area.
- Assess the extent of wildlife habitats of various habitat quality classes.
- Identify potential space for displaced wildlife and their corridor values.
- Propose measures to mitigate the loss of wildlife habitat in Dindori area with adequate mitigative measures.
- Suggest techniques of habitat improvement along with budgetary estimates.

CONCLUSION

Environmental Impact Assessment (EIA) is a process of evaluating the likely environmental impacts of development, taking into account inter-related socio-economic, cultural and human-health impacts, both beneficial and adverse. sub-impact zones considered as observation block for documentation and assessment of impact, identify the species of various categories of rare, endangered, migratory, domestic etc, found in the Dindori area, data used to make wildlife conservation plan of sustained wildlife of the area. Conflict management strategies earlier comprised lethal control, translocation, regulation of population size and preservation of endangered species. Recent management approaches attempt to use scientific research for better management outcomes, such as behaviour modification and reducing interaction. As human-wildlife conflicts inflict direct, indirect and opportunity costs, the mitigation of human-wildlife conflict is an important issue in the management of biodiversity and protected areas.

References -

- MacKinnon, A. J., Duinker, P. N., Walker, T. R. (2018). The Application of Science in Environmental Impact Assessment. Routledge.
- Eccleston, Charles H. (2011). Environmental Impact Assessment: A Guide to Best Professional Practices. Chapter 5. ISBN 978-1439828731
- Caves, R. W. (2004). Encyclopedia of the City. Routledge. p. 227.
- "Principle of Environmental Impact Assessment Best Practice" (PDF). International Association for Impact Assessment. 1999. Archived from the original (PDF) on 2012-05-07.
- Holder, J., (2004), Environmental Assessment: The Regulation of Decision Making, Oxford University Press, New York; For a comparative discussion of the elements of various domestic EIA systems, see Christopher Wood Environmental Impact Assessment: A Comparative Review (2 ed, Prentice Hall, Harlow, 2002).
- Clark & Canter 1997, p. 199.
- Rychlak & Case 2010, p. 111-120.
- Kershner 2011.
- Daniel, S., Tsoulfas, G., Pappis, C., & Rachaniotis, N. (2004) Aggregating and evaluating the results of different Environmental Impact Assessment methods Ecological indicators 4:125-138
- Hitzschky, K., & Silviera, J. (2009) A proposed impact assessment method for genetically modified plants (As-GMP method) Environmental Impact Assessment review 29: 348-368

•••

Emerging Research Journal ISSN No. : 2456-2424 : June 2021, Volume-5, Issue-1 / Impact Factor = 3.01

What the Borrower Should Know About the SARFAESI Act?

Mr. Nishit Paul*

Abstract

The Banking business involves the business of lending and deposit. Therefore, this business comes with an inert risk of losing the capital lend to the borrower, for this the Parliament has enacted two legislations for the Bank and other Credit companies can make a recovery action. The two laws are the Recovery of Debt and Bankruptcy Act, 1992 and the Securitization and Reconstruction of Financial Assets and Enforcement of Security Interest Act, 2002 (SARFAESI). The laws have given stringent power to the Credit Companies and the Bank to initiate recovery from the Borrowers. The law also have established an independent Tribunal i.e, the Debt Recovery Tribunal for adjudication of the Recovery Proceedings. The SARFAESI Act have given extensive power to the Credit Companies and the Bank to sell or auction the properties of the Borrower without the intervention of the Courts. Whereas, the Borrower can protect its interest if the Lenders actions are illegal in a recovery proceeding, for this the borrower has to approach to the Debt Recovery Tribunal which has the power to dismiss the claims of the Lender if found illegal. The laws are enacted with the increase in bad loans which the Banks are unable to recover from the borrower and it has served its purpose very well in these times. The laws also has established a mixture of Recovery of debts and the protection of the interest of the Borrower as well.

Key word - *Recovery of Debts or Unpaid loans.*

Introduction -

The Indian Banking Industry having a valuation of 1.565 trillion dollars[1] (11,000 crore Rupees) of market size and has the highest amount of employment generating industry having a workforce of high standards for generating significant output in the economy[2].

The major contribution it generates through advancing credit into the economic system and entities that require working capital or investment for running business. This advancing capital and investment into businesses comes with a dire risk of recovery and the safety of interest of the Lending entities such as Banks.

- **The Laws which are applicable for initiating Recovery**

The Banks while advancing loans, takes security in the form of assets or guarantee agreements from the borrower which acts as a surety for the repayment of the Loan. The Parliament seeing the

1. https://www.ibef.org/industry/banking india.aspx#:~:text=The%20Indian%20banking%20system%20consists,US%24%201.86% 20trillion%20by%20FY19.
2. http://www.businessworld.in/article/Banking-Sector-Gave-Maximum-Employment-In-FY17/ 02-11-2017-130293/

***Advocate, M.P. High Court, Jabalpur, (M.P.)**

nature of the action taken by the Bank to recovery has enacted special enactments for a speedy recovery oney lend by the Banks. The Recovery of Debts and Bankruptcy Act, 1992[3] (RDB Act) and the Secularization and Reconstruction of Financial Assets and Enforcement of Security Interest Act, 2002[4] (SARFAESI Act) are the major legislation that helps in speedy recovery of debts.

The two enactments gives the power to the Bank in the recovery of bad debts or loans. The RDB Act is a quasi Judicial proceeding whereby a recovery application is file by the Bank. Whereas, the SARAFESI Act gives much power to the bank in executing a sale of asset without the intervention of the Court but with limited caveats being placed against such power.

When cause of Action arise?

A cause of action means a particular event which surmises with the initiation of legal action to be taken by the Bank against the Borrower. The Borrower has to be aware of the event or of any legal action by the Bank to initiate a recovery action.

The cause of action is presumably be taken by issuing a Notice to the Borrower.

- **The issuance of legal notice**

The borrower will receive a legal notice also known as demand notice from the Bank for the default of payment of dues and will demand the full payment of money towards the debt account and will also mention the consequences will attain to the borrower if the debt is not paid. The notice is issued under Section 13(2) of the SARFAESI Act by the Bank.

- **The important contents in the demand notice**

The following information will be availed from the demand notice:

1) The loan account of the Bank and for which purpose the loan was availed by the Borrower.

2) The amount of debt due upon the borrower, the principal amount of debt and the interest over the debt with the information about the last instalment made into the account.

3) The consequences of the borrower if the debt is not paid in time. As per the SARFAESI Act, the bank has to give 60 days from the service of summons to the borrower for the submission of the claim amount. If unpaid the account is declared as NPA (Non Performing Asset), which enable the Bank to take stringent action towards the borrower for recovery.

4) Other recourse the Borrower can take in opposition to the allegations made in the demand notice.

- **The least legal knowledge the Borrower should know**

The borrower should be aware and be ready with necessary legal defuses against the demand notice issued by the Bank.

The borrower should know that a recovery action in RDB Act and SARFAESI Act can only be applicable if the borrower, has a default not exceeding **Rs. 20 Lakhs**[5], then only jurisdiction of taking recovery action by the Bank before the Debt Recovery Tribunal can take place.

3. http://www.drat.tn.nic.in/Docu/RDDBFI-Act.pdf

4. http://www.drat.tn.nic.in/Docu/Securitisation-Act.pdf

5. https://www.livemint.com/Industry/R08gDWdQst5su4PAsuVbBP/Limit-for-filing-cases-in-DRT-doubled-to-Rs-20-lakh.html

- **Objections against the demand notice**

The borrower can in opposition to the demand notice under Section 13(2) can send an objection to the Bank, which is his legal right to do and it is very necessary to establish its defense against an illegal allegation produced by the Bank.

This was similarly opined in landmark case of **Mardia Chemicals Limited and others vs. Union of India[6],** that 'the purpose of serving the notice under Section 13(2) of the SARFAESI Act upon the borrowers is that they may submit a reply explaining the reasons as to why measures may, or may not, be taken under sub-section 4 of Section 13, in case of the non-compliance of the notice within 60 days. It is submitted that the Supreme Court has held, that the creditor must apply its mind to the objections raised in reply to such notice and an internal mechanism must be particularly evolved to consider such objections.'

- **Time limit for raising objections**

Thus, its necessary for the borrower to raise objection as part of first line of defnese against the Bank for carrying with a stringent action under Section 13(4). The Borrower has to make the communicate of its objections within 15 days from the date of receipt of the demand notice.

Though, their is caveat in making an objection because it is upon the Bank or creditor to accept or to rely upon the objections raised by the Borrower and the Bank still will have the continuous legal power to to initiate recovery action against the Borrower after completion of 60 days.

The other recourse, the Borrower can go for a negotiation with the Bank or a One Time Settlement Scheme (OTS). Negotiations and OTS are like win-win situations for both parties in dispute.

What can the Bank do after issuance of Possession Notice?

The Bank after the completion of 60 days in the demand notice will issue a possession notice under Section 13(4) of the SARFAESI Act. The possession notice will give the power to the Bank to take declaratory possession over the assets of the borrower which were given as security.

- **The important details for taking possession of the asset by the Bank.**

The possession notice can be published at any time after the competition of the 60 days of the demand notice by the Bank. The possession notice is published in two newspapers generally in an English Newspaper and a Local language newspaper of the District where the assets is situated.

The possession notice calls for the bid in the auction of the secured asset of the borrower. Other details like the date of the auction of the secured asset, which is generally conducted after 30 days form the date of the issuance of the possession notice.

The possession notice also provide the base price of secured asset for calling potential bidders in the e-auction, it is also noted that, the borrower himself can also take part in the auction process.

- **Taking Physical Possession by the Bank.**

The Bank can through an executive action by an affidavit to the District Magistrate (DM) or Chief Metropolitan Magistrate(CMM) and can take the physical possession of the secured asset if the asset is an immovable property by force, as per the Section 14 of the SARFAESI Act.

6. 2004 (4) SCC 311

The Borrower in such situation cannot file an objection before the DM or CMM and by the executive order the Bank can take the physical possession by force. The only objection the Borrower can make is through an application under Section 17 of the SARFAESI before the Debt Recovery Tribunal (DRT).

- **Things Borrower can do before the auction to protect its interest.**

The borrower can still try to attain the secured asset either it being a movable or immovable property by a private treaty. This can also termed as negotiations in part of the Borrower for avoiding public auction of the property. The Borrower has to make sure that the secured asset does not devolves into an auction. Though the borrower still have the remedy if illegality in part of the Bank or Creditor occurs.

How to prove the actions taken by the Bank is wrong?

- **Appeal before the Debt Recovery Tribunal**

The actions taken by the Bank can be proved wrong by filing an application before the Debt Recovery Tribunal under Section 17 of the SARFAESI Act. As per the said section, if the Tribunal found any illegality in part of the Borrower in taking possession of the secured asset then has the power to:

1. declare the any one or more measures described in Section 13(4) taken by secured creditor as invalid for not following the provisions laid down by the law and the rules made thereunder.
2. It can restore the possession of the secured assets or management of the secure asset back to borrower.
3. It can make necessary order for or direction in relation to any of the recourse taken by the secured creditor under Section 13(4).

Though, following the above recourse is the best possible method ensuring the protection of interest of the Borrower and the borrower should proceed it at early as possible because to avail this benefit it has to approach before the Tribunal within 45 days from the date of issuance of possession notice by the Bank or any of the measures taken by the Bank under Section 13(4).

- **The limitation in approaching the DRT**

The Borrower has to be early in approaching the Debt Recovery Tribunal because there is a period of limitation of 45 days in approaching before the Tribunal and the delay cannot be condoned because the Limitation Act is not applicable.

In the judgment of the High Court of Calcutta in Akshat Commercials Private Ltd. Vs Kalpana Chakrobortywhere it was held that, confirm the previous judgments of the Supreme Court that the limitation Act is not applicable in securitization application registered under Section 17 of the SARFAESI because, the nature of the application under Section 17 is of an application rather than a petition. Thus, the borrower has to be quick enough to raise the grievances and hardship caused by the by the actions of the Bank.

- **Illegality on the part of the Bank can be reversed.**

The Bank or the creditor has to so certain in establishing that the legal action taken under the SARFAESI, that the DRT can nullify the whole proceeding if any discrepancy is observed in the part of the Borrower.

[7]As seen in the case of **Parleen Chopra vs Shri Honey Bhagat and Ors**[8] of the High Court of Delhi, where a successful auction was conducted by the Bank and the Auction Purchaser has deposited full consideration amount of the auction to the Bank, though no sale certificate of the auction was isseud to the auction purchaser. The DRT held, that the whole auction proceeding was illegal because the Bank did not issued possession notice in two newspaper. This made the whole auction proceeding illegal and the Borrower was able to retain its possession of the secured asset.

Therefore, the Borrower has to aware and stringent in taking quick action in approaching the legal discrepancies taken by the Bank for using excessive power under the SARFAESI Act.

Conclusion

The business of lending with a proper mechanism of regulations employed for function of the business. The risk amounting from such business has been secured by the legal functioning and with a proper Dispute Resolution or Tribunal in protecting the interest of the customers of the Banking Companies. The law of recovery of debt is clear and has properly classified the different in recovery of the loans which affect the business of lending as well as protecting the interest of the borrower that such imminent power to the Bank does not violate or act against the interest of the whole industry.

•••

7. High Court of Calcutta in W.P No. 131 of 2018

8. High Court of Delhi in CS(OS) No. 190 of 2018

कोविड-19 रोग में आयुर्वेद प्रबन्ध

डॉ. देवेश रंजन त्रिपाठी *
डॉ. अदिती गोस्वामी **

शोध-सारांश

''आयुर्वेदयति बोधयति इति आयुर्वेदः''

आयुर्वेद दीर्घायु एवं अन्न समृद्धि के लिए जागरूक करता है अर्थात् जो शास्त्र आयु का (जीवन) का ज्ञान कराता है वही आयुर्वेद है। मानव जीवन में रोग के कई कारण होते हैं-मच्छर, मक्खी, बाह्य जीव-जन्तु, आघात, विषाणुओं का संक्रमण जो स्वस्थ्य व्यक्ति के रक्त के सीधे सम्पर्क में आकर शरीर की प्रतिरोधक क्षमता को नष्ट कर देते हैं। इनसे उत्पन्न रोगों से बचने के लिए मनुष्य अनेकों प्रकार की एलोपैथिक, होम्योपैथिक नैचुरोपैथिक आदि औषधियों का सहारा लेता है।

''हिताहितं सुखं दुःख आयुस्तस्य हिताहितय।

मान च तच्च यत्रोक्तं आयुर्वेदः स उच्चयते।।''

आज आधुनिक जगत कोविड-19 जैसी महामारी का सामना कर रहा है। यह महामारी पिछली सदी के स्पेनिश फ्लू (1918) के समान है ऐसा माना जा रहा है। दिसम्बर 2019 को चीन से नोबल कोरोना वायरस फैलने की जानकारी सम्पूर्ण विश्व को हुयी। चीन के वुहान से फैली निमोनिया जैसे लक्षणों वाली इस बीमारी को विश्व स्वास्थ्य संगठन ने आधिकारिक रूप से कोविड-19 का नाम दिया।

कोविड-19 के खतरे का आंकलन करने में सभी से चूक हुयी किन्तु इस महामारी ने कई सबक दिये,जिनमें से दो बिन्दुओं पर विशेष रूप से ध्यान देना आवश्यक है-स्वास्थ्य तंत्र को मजबूत करना तथा लोगों को अपनी दिनचर्या और व्यवहार में बड़े बदलाव लाना। जिन्हें स्थायी रूप से अपनाना ही होगा।

आज सम्पूर्ण मानव जाति परमाणु बम अथवा मिसाइल से नहीं वरन् वायरस से भयभीत है। वायरस से कुछ व्यक्ति संक्रमित नहीं होते और यदि होते भी हैं तो शीघ्र स्वस्थ हो जाते हैं। वहीं कुछ व्यक्ति जल्दी-जल्दी संक्रमित होते हैं तथा स्वस्थ होने में समय लेते हैं, जो व्यक्ति की प्रतिरोधक क्षमता पर निर्भर करता है। यह प्रतिरोधक क्षमता दो प्रकार से मुनष्यों को प्राप्त होती है। प्रथम-यह प्रकृति प्रदत्त है जो हमारे शरीर को किसी बाह्य विषाणु से लड़कर हमें बिना सूचित किये स्वस्थ रखती है। दूसरा-प्रतिरोधक क्षमता को अर्जित करना। भारत यह कार्य अपने प्राचीन वेद आयुर्वेद की सहायता से सुगमता पूर्वक कर रहा है।

आयुर्वेद क्या है?

आयुर्वेद वह विज्ञान है जो जीवन जीने के लिए हितकारी और अहितकारी, पथ्य और अपथ्य, जीवन जीने की शैली,

***सहायक प्राध्यापक, बिजनेस मैनेजमेन्ट, यू.पी.आर.टी.ओ.यू. प्रयागराज**
****सहायक प्राध्यापक, शिक्षा शास्त्र, महिला सेवा सदन डिग्री कॉलेज, प्रयागराज**

रोगों से बचाव के तरीके और रोगों के उपचार के उपायों का ज्ञान कराता है। इस प्रकार आयुर्वेद भारतीय कला, दर्शन एवं विज्ञान का अद्‌भुत समन्वय है। यह विश्व की प्राचीनतम चिकित्सा पद्धतियों में से है। आयुर्वेद के त्रिदोष–बात, पित्त और कफ हैं, जिससे शरीर का विज्ञान एवं जीवन का निर्माण होता है।

आयुर्वेद न केवल रोग के कारण एवं निवारण को बताता है वरन् विभिन्न रोगों के कारणों से भी सतर्क करता है। आयुर्वेद के उपचार में अनुशासित रहना एवं समय–समय पर वर्णित पदार्थों का सेवन एवं निषिद्ध का त्याग करना अनिवार्य है। इसके अतिरिक्त हर्बल पदार्थों के प्रयोग के साथ खनिज एवं धातु पदार्थों का भी उपयोग उपचार के लिए किया जाता है।

कोविड–19 में आयुर्वेदिक–प्रबन्धन

कोविड–19 के विरुद्ध लड़ने के लिए शारीरिक प्रतिरोधक क्षमता किस प्रकार विकसित किया जाये। उसके लिए आयुर्वेद के द्वारा दिये गये मुख्य सामान्य निर्देश निम्नवत है–

- स्वच्छता का विशेष रुप से ध्यान रखना।
- साबुन, पानी से 20 सेकेण्ड तक हाथ धोना।
- छींकते व खाँसते समय मुख को ढाँक लेना।
- गर्म जल पीना।
- सार्वजनिक स्थानों पर निर्धारित मानक दूरी का प्रयोग करना।
- घर से बाहर निकलते समय मास्क का प्रयोग।
- प्रतिदिन काढ़ा का सेवन करना।
- प्रतिदिन हल्दी वाला दूध पीना।
- नाक में प्रतिदिन तिल का तेल व घी की कुछ बूँदे डाले।

आयुर्वेदिक चिकित्सक डॉ. संजय कुमार ने आयुर्वेदिक द्वारा कोविड–19 से बचाव के निम्न उपाय बताये हैं जो प्रतिरोधक क्षमता मजबूत करने में सहायक है। तुलसी के पत्ते का स्वरस का काढ़ा, गिलोय घनवटी की गोली, सुबह–शाम लेने से भी प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है।

रोग–प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूत करना–

कोविड–19 के संक्रमण काल में जब सम्पूर्ण मानव जाति शारीरिक और मानसिक रूप से भयभीत है। ऐसे में शरीर की प्राकृतिक रक्षा प्रणाली को मजबूत करना महत्वपूर्ण है–

- दिन भर गर्म पानी पीये।
- प्रतिदिन कम से कम 30 मिनट योगाभ्यास करना।
- भोजन में हल्दी, जीरा, धनिया, अदरक आदि का प्रयोग।
- दिन में 1–2 बार काढ़ा पीना जिसमें तुलसी, दालचीनी, काली–मिर्च, सोंठ आदि हो।
- दूध में हल्दी डालकर गर्म–गर्म पीना।

निष्कर्ष -

कोविड-19 की विकट परिस्थिति से आज प्रत्येक व्यक्ति जूझ रहा है ऐसे में धैर्य के साथ अपने को पूर्ण रूप से स्वस्थ्य रखना आवश्यक है। 'तत्र अंचयापन्ना नामोषधी नामपंचोपयोगः' अर्थात् ऋतुओं की विकृति के समय तथा महामारी रोग उत्पन्न हो जाने पर अदूषित औषधियों तथा जल का उपयोग करना चाहिए।

स्वस्थ एवं अनुशासित जीवन शैली का कोई विकल्प नहीं हम सभी को प्राचीन आयुर्वेदिक पद्धति का अपनी दिनचर्या में विशेष रूप से ध्यान रखना होगा जिससे कोविड-19 एवं उसके बाद का जीवन काल भी स्वस्थ्य रहे-

- प्रतिदिन व्यायाम अथवा योग करना।
- गर्म जल का सेवन करना।
- भोजन में नियमित रूप से हल्दी, दालचीनी, लौंग, सोंठ, छोटी इलायची, तेजपत्ता, जीरा, मैथी दाना आदि का प्रयोग करना।
- काढ़ा दिन में 2-3 बार लेना (दालचीनी, लौंग, इलायची, तेजपत्ता) अथवा आयुर्वेदिक काढ़ा।
- हल्दी युक्त दूध।
- भीड़-भाड़ वाले स्थानों से दूरी बनाए रखना।
- स्वच्छता का विशेष ध्यान रखना।
- अधिक से अधिक ताजे फल व सब्जियों को सेवन करना।

इन निर्देशों का पालन करने के साथ-साथ मानसिक रूप से स्वस्थ रहना भी आवश्यक है। व्यर्थ की चिन्ता न करके सृजन कार्यों में मन लगाना चाहिए। ये सभी बातें कोविड-19 से लड़ाई में सहयोग करेंगी।

संदर्भ सूची -

1. सम्पादक, प्रकृति की सर्वश्रेष्ठ कृति बनिक, प्रतियोगिता दर्पण, जुलाई 2014, पृ0 11
2. बुधौलिया, अनन्त आभा, 'संस्कृत द्वारा वैज्ञानिक विकास', शोध धारा, जालौन उत्तर प्रदेश, पृ0 85
3- currentaffairs.adda247.com
4. https://nirogstreet.com
5. https://m.livehindustan.com
6. https://m-hindi.webdunia.com
7. पाण्डेय, काशीनाथ एवं चतुर्वेदी, गोरखनाथ, 'जनपदोद्ध्वसनीय विमानाध्याय-3; जनपदेद्ध्वंस प्रकरण, चरक संहिता, चौखम्भा विश्वभारती वाराणसी, 1998, पृ0 693-694
8. शास्त्री, अम्बिका दत्त, 'सूत्रस्थानम् अध्याय-6, सुश्रुत संहिता', चौखम्भा संस्कृत संस्थान, वाराणसी, 1997, पृ0 21
9. कुमार, डॉ. प्रत्यूष, तिवारी डॉ. डी.एन. (2016, नवम्बर), 'योग-आयुर्वेद से बढ़ाए अपनी रोग-प्रतिरोधक क्षमता' हरिहर उत्तराखण्ड, योग संदेश।
10. उपाध्याय, डॉ. आनन्द कुमार (2020,मई) 'रोगों से लड़ने की शक्ति बढ़ाने के आसान उपाय' नई दिल्ली, कुरुक्षेत्र।

•••

राजाराम मोहन राय-नारी स्थिति में सुधार

श्रीमती आराधना कुमारी *

शोध-सारांश

सती प्रथा अर्थात् मृत पति के साथ विधवा पत्नी को चिता पर जलाने की प्रथा भारत में प्राचीन काल से चली आ रही थी। खास तौर पर मध्ययुग में इस प्रथा ने भयंकर रूप धारण कर लिया जो समाज एवं देश के लिए कलंक का विषय बन गया था तथा सभ्य संसार में उपहास का कारण बन गया था। समाज में अक्सर कहीं न कहीं अंधविश्वास की घटनायें घट रही है जो सामाजिक परिवर्तन में आघात है। जब तक अशिक्षा, अंधविश्वास समाज में रहेगा ऐसी घटनाएँ घटित होती रहेगी।

भारत में सती प्रथा का प्रचलन प्राचीन समय से ही रहा है। रामायण में मेघनाथ की पत्नी सुलोचना, महाभारत में पाण्डु की दूसरी पत्नी माद्री आदि ऐसे अनेक उदाहरण हैं। पन्द्रहवीं सदी के आरम्भ में कश्मीर शासक सिकन्दर ने सती प्रथा को बन्द करने का प्रयत्न किया। इसके बाद गोवा में अलबुकार्क ने 1510 में अकबर, जहाँगीर एवं पेशवा बाजीराव ने भी सती प्रथा को बन्द करने का प्रयास किया किन्तु असफल हुये। दो हजार वर्षों से भी अधिक समय से यह कुप्रथा भारत में चली आ रही थी।

कुछ स्त्रियाँ अपनी खुशी से पति की चिता पर बैठकर सती हो जाती थी क्योंकि उन्हें विश्वास था कि इससे वे अपने पति के साथ स्वर्ग में भी रहेगी।

हजारों वर्षों की इस परम्परा ने समय के साथ जघन्य रूप धारण कर लिया और जो स्त्रियाँ पति के साथ नहीं जलना चाहती थी उन्हें जबरदस्ती सती होने के लिए बाध्य किया जाता था। उन्हें पति के शव के साथ बाँधकर घण्टे, घड़ियाल बजाकर स्त्री के चीखने चिल्लाने की आवाज को दबा दिया जाता अथवा विरोध करने पर मारा-पीटा, नशे की दवा पिलाकर बेहोश कर शव के साथ रख दिया जाता था। स्त्रियों को बलपूर्वक जलाने के पीछे एक कारण यह भी था कि वह मृत पति की सम्पत्ति की भागीदार न बने।

5 फरवरी, 1805 लार्ड वेलेजली ने निजामत अदालत से सती प्रथा बन्द करने के लिए राय माँगी जिसमें बताया गया कि इससे हिन्दुओं की भावनाओं को ठेस पहुँचेगी। ईस्ट इण्डिया कम्पनी और शिक्षित भारतीयों में इस प्रथा के प्रति आक्रोश था। ऐसे समय में समाज सुधारक राजाराम मोहन राय ने सती प्रथा के विरुद्ध संघर्ष आरम्भ किया इसके साथ ही उन्होंने बहुविवाह, बाल-विवाह, जात-पात, अस्पृश्यता और स्त्रियों के सम्पत्ति पर अधिकार जैसे कई सामाजिक अन्यायों के विरुद्ध आन्दोलन किया।

लगभग 1818 में राजाराम मोहन राय ने सती प्रथा के विरुद्ध पूरी तरह से आन्दोलन आरम्भ कर दिया। राजाराम मोहन राय ने सरकार के पास सती प्रथा के विरुद्ध आवेदन पत्र ही नहीं भेजे वरन् लेखों, पुस्तिकाओं और समाचार पत्रों के माध्यम से लोगों के मध्य जागरूकता फैलाना आरम्भ किया। जनता के मध्य सती प्रथा के विरुद्ध लोकमत तैयार करने के लिए बांग्ला और अंग्रेजी भाषाओं का प्रयोग किया, जिसका परिणाम यह हुआ कि उन्हें सामाजिक और कई अन्य प्रकार के

***एसोसिएट प्रोफेसर, इतिहास विभाग, महिला सेवा सदन डिग्री कॉलेज, प्रयागराज**

अत्याचार सहने पड़े परन्तु उन्होंने लोगों को सती प्रथा के लिए जाग्रत किया। जिसका परिणाम यह हुआ कि अनेकों धनी और प्रतिष्ठित लोग राजाराम मोहन राय के विचारों का खुले आम समर्थन करने लगे और इस नारकीय प्रथा को समाप्त करने के लिए अपना समर्थन देने लगे। अब सभी लोग यह जान गये थे कि किसी भी हिन्दू धर्मशास्त्र में इस प्रथा के लिए विधान नहीं है, जबकि कुछ लोग अब भी इस बलिदान को पुण्य मान रहे थे।

राजाराम मोहन राय ने सती प्रथा को बढ़ावा देने वाली सामाजिक कुरीतियों, समस्याओं को बहुत निकट से देखने का प्रयास किया ''ऐसा नहीं कि हिन्दू विधवाएँ किसी धार्मिक पूर्वाग्रह या पुरानी धारणाओं से प्रभावित होकर अपने मृत पति की चिता पर अपनी आहुति देती हो वरन् वे अक्सर अपने ही बीच रहने वाली विधवाओं को उनके जीवन में तुच्छता और घोर अपमान सहते देखती है इसीलिये ये विधवाएँ अपने पति की मृत्यु के बाद अपने जीवन और अस्तित्व के प्रति बिल्कुल लापरवाह बन जाती है। इस असहाय अवस्था के प्रभाव में जब भविष्य में (स्वर्ग लोक) में पुरस्कार प्राप्त होने का प्रलोभन दिया जाता है तो स्वभावत: वे इस जघन्य आत्महत्या को करने के लिए प्रेरित हो जाती है।'' इस कथन से स्पष्ट होता है कि राजाराम मोहन राय ने समस्या के जड़ में जाकर उसका सामाजिक विश्लेषण किया और उसके निदान के लिए उन्होंने जीवन भर प्रयास किया।

राजाराम मोहन राय के विचार सामाजिक परिवर्तन के विचार हैं उन्होंने नारी उत्थान के लिए सदैव कार्य किया जिसके परिणामस्वरूप लॉर्ड विलियम बैंटिक द्वारा सती प्रथा अधिनियम 4 दिसम्बर 1829 को पारित किया गया, कानून में कहा गया कि जो लोग विधवा को बलपूर्वक जलायेंगे उन्हें प्राण दण्ड दिया जा सकता है जिससे धीरे-धीरे सती प्रथा का प्रचलन बन्द हो गया किन्तु अब भी यदा-कदा 'सती' होने की खबर सुनायी दे जाती है।

सारांश -

भारत वर्ष आजादी के इतने वर्षों बाद भी अंधविश्वासों, कुरीतियों से घिरा है हालांकि पहले की तुलना में यह काफी कम है किन्तु समाज में अक्सर कहीं न कहीं अंधविश्वास की घटनायें घट रही है जो सामाजिक परिवर्तन में आघात है। जब तक अशिक्षा, अंधविश्वास समाज में रहेगा ऐसी घटनाएँ घटित होती रहेगी।

संदर्भ सूची -

1. मुखर्जी, रवीन्द्र नाथ, भारत में सामाजिक परिवर्तन, पृ.सं.-252
2. दश्र, कार्तिक चन्द्र, राजाराम मोहन राय जीवन दर्शन, पृ.सं.-265
3. मजूमदार राजाराम मोहन राय एण्ड प्रोग्रेसिव मूवमेंट इन इण्डिया, पृ.सं. 114, कलकत्ता गजट 24 दिसम्बर 1818
4. मुखर्जी, रवीन्द्रनाथ, भारत में सामाजिक परिवर्तन, पृ.सं.252
5. सचान, अनीता, 'सामाजिक आन्दोलनों में राजाराम मोहन राय एवं ईश्वर चन्द्र विद्यासागर की भूमिका: एक ऐतिहासिक अध्ययन।

•••

संगीत में आध्यात्म योग तथा रोग उपचार

*डॉ. तापसी नागराज **

शोध सार

संगीत का मूल मंत्र है नाद ब्रम्ह अर्थात् ध्वनि। स्वरों की वह मधुर रचना जो जन साधारण के मन को मोह ले वह संगीत है। संगीत की जननी ध्वनि है। संगीत केवल मनोरंजन का साधन ही नहीं वरन, इसके द्वारा किया गया योग और उपचार आज पूरे विश्व में फैला हुआ है। आध्यात्म भी संगीत का एक अहम् हिस्सा है। आध्यात्म के साथ संगीत का गहरा सम्बन्ध है। आध्यात्म में ईश्वर प्राप्ति का एक माध्यम है – संगीत के द्वारा उनकी आराधना। आध्यात्म का अर्थ मन को ईश्वर में लगाना और उनकी स्तुति करना–ध्यान करना और उसके गूढ़ तत्वों की गहराई को जानना ही आध्यात्मिकता है। योग में भी आध्यात्म छिपा है। योग में ऊँ शब्द के उच्चारण होते ही हम आध्यात्म और योग से जुड़ जाते हैं। प्राचीन ऋषि मुनियों को योग के द्वारा सिद्धि प्राप्ति होती थी। कई ऐसे रोगी जो मानसिक संतुलन खो बैठे हैं, संगीत चिकित्सा द्वारा उनका भी उपचार संभव है। उच्च रक्तचाप के रोगियों का इलाज संगीत के द्वारा किया जाता है। कुछ राग ऐसे हैं जिनके गायन या वादन से रोगी को मानसिक व शारीरिक व्याधि से मुक्ति मिलती है। इस विषय का चुनाव इसलिए भी किया गया है ताकि भविष्य में संगीत के छात्रों को संगीत के द्वारा उपचार और योग के विषय में जानकारी मिल सके।

भारत की साँस्कृतिक विरासत का अनमोल हिस्सा है हमारा भारतीय शास्त्रीय संगीत। सृष्टि के आरंभ से आज तक यह निरन्तर प्रवाहमान है। मोक्ष प्राप्ति और आत्मिक मिलन का एक सुखद और पवित्र साधन माना गया है हमारा भारतीय संगीत। संगीत ऐसी विधा है जिसका उल्लेख वेदों में भी मिलता है। वेदों की ऋचाएँ स्तुति मंत्र थी जिन्हें उदात्त, अनुदात्त और स्वरित जैसे स्वरों से सिद्ध किया गया है।

भारतीय संगीत ललित कलाओं में श्रेष्ठतम् कला है जिसमें अद्भुत क्षमता और शक्ति है। ईश्वर की प्राप्ति तथा मोक्ष प्राप्ति का सहज मार्ग है हमारा भारतीय संगीत। नाद के प्रणेता भगवान शंकर को माना गया है और उनके द्वारा उच्चारित 'ऊँ' से जगत का हर कार्य संचालित होता है।

भारतीय संगीत ललित कलाओं में श्रेष्ठतम् कला है जिसमें अद्भुत क्षमता और शक्ति है। ईश्वर की प्राप्ति तथा मोक्ष प्राप्ति का सहज मार्ग है हमारा भारतीय संगीत। नाद के प्रणेता भगवान शंकर को माना गया है और उनके द्वारा उच्चारित 'ऊँ' से जगत का हर कार्य संचालित होता है। संगीत और आध्यात्म आपस में जुड़े हुये हैं अंतर सिर्फ इतना है कि अगर किसी काम में पूरी तन्मयता से सम्मिलित होते हैं वहीं से आध्यात्मिक प्रक्रिया शुरू हो जाती है। किसी भी तथ्य को सतही तौर पर जानना संस्कारिता है और उसे गहराई से जानना आध्यात्मिकता है। आध्यात्म्य यानि व्यक्ति के मन को ईश्वर में लगाना और व्यक्ति का ईश्वर से साक्षात्कार होना। संगीत को अभिव्यक्ति का साधन मानकर संगीत की उपासना की गई है। संगीत से मन की एकाग्रता और गहरी होती जाती है। वेदों में उपासना का मार्ग परब्रह्म शक्ति माना गया है। संगीत सर्वव्यापक है और विविधताओं से परिपूर्ण है। इसके द्वारा अद्वैत का, द्वैत रूप में साक्षात्कार किया जा सकता है। संगीत हमें सांसारिकता से आध्यात्म की ओर ले जाता है।

सहायक प्राध्यापक, सेंट अलॉयसियस कॉलेज, जबलपुर (म.प्र.)

भारत में प्राचीन काल से ही वेदों में संगीत का उल्लेख मिलता है। सामवेद में ऋचाओं का गायन, मंत्रों का उच्चारण किसी एक राग विशेष में किये जाने का 'संगीत विशारद' में उल्लेख है। मंत्रों का सस्वर गायन आध्यात्मिकता के और निकट ले जाता है।

संगीत एक यौगिक क्रिया भी है। प्राणायाम, योग निद्रा द्वारा उद्वेलित मानसिक अवस्था को शांत कराने की क्षमता है जो केवल मानव हृदय पर ही नहीं वरन् पशु पक्षी तथा प्रकृति पर भी अपना प्रभाव छोड़ता है। संगीत के विशिष्ट प्रभाव का मानव जीवन के मन और मस्तिष्क पर पड़ता हुआ असर देखकर चिकित्सा विज्ञान ने भी संगीत को चिकित्सा पद्धति से जोड़ा है और इस बात की पुष्टि भी की है, कि इसका प्रयोग अगर उचित ढंग से किया जाये तो शारीरिक और मानसिक रोगियों के लिये यह काफी लाभप्रद हो सकता है। शारीरिक व्यायाम के साथ ही, मन मस्तिष्क पर भी इसका गहरा असर होता है। आयुर्वेद चिकित्सा भी इसे स्वीकार करती है कि संगीत द्वारा उपचार के अतिरिक्त इसमें योग निवारक गुण भी विद्यमान है।

प्राचीन काल से ही संगीत का प्रयोग मानसिक अवस्था को नियंत्रित करने के लिये भी किया जाता रहा है। संगीत सुनने तथा आनंद प्राप्त करने वाले पर भी इसका गहरा असर होता है। वैज्ञानिक रूप से भी यह साबित हो चुका है कि संगीत द्वारा रोगों का उपचार न केवल संभव है बल्कि सफल भी ('संगीत चिकित्सा' 'प्रो.स्वतंत्र शर्मा' पेज-15)। संगीत चिकित्सा पर अगर हम नज़र डालें तो पता चलता है कि संगीत और चिकित्सा का संबंध बहुत पुराना और गहरा है। सबसे पहले संगीत के चिकित्सकीय प्रयोग का उल्लेख हमें ताम्र युग में मिलता है और संगीत के ग्रंथों से भी हमें पता चलता है कि उस युग में भी जब कोई बीमार पड़ता था तो उसे दवा के अलावा संगीत के द्वारा भी उपचारित किया जाता था। ('संगीत निबंध संग्रह' 'हेमंत कुमार जोशी पेज-94')।

आज समाज के बदलते हालात में हर व्यक्ति जीवन की आपाधापी में उलझा हुआ है और अपनी आकांक्षाओं के पूरे न होने की वजह से कुंठित हो रहा है। बच्चों से लेकर बड़े भी कई कारणों से तनावग्रस्त हैं। इन परिस्थितियों की ज़िम्मेदार हमारे समाज की बदलती हुई आर्थिक और सामाजिक परिस्थितियाँ हैं और इन्हीं से मुक्त होने के लिये मनोचिकित्सक संगीत का सहारा ले रहे हैं। मनुष्य में बढ़ती बीमारियाँ मानसिक तनाव को जन्म दे रही है। ('मनोचिकित्सा विकिपीडिया', भ्ण्ण्डण्ॅपापचमकपं)

1. जीवन के हर क्षेत्र में बढ़ती जी तोड़ प्रतियोगिता,
2. असुरक्षा की भावना,
3. आत्मविश्वास की कमी,
4. विभिन्न प्रकार की चिन्ताएँ, आदि

इन्हीं सब कारणों से होने वाले तनाव, शारीरिक और मानसिक विकारों को जन्म देते हैं और कई प्रकार की परेशानियाँ भी शुरू हो जाती हैं जैसे अनिद्रा, उच्च रक्तचाप, मधुमेह, हृदय रोग, पागलपन, चिड़चिड़ापन, डिप्रेशन आदि-आदि। इन बीमारियों के लिये शास्त्रीय संगीत के कुछ राग तय किये गये हैं जिनके द्वारा एक रोगी को कुछ राग सुनाये जाने पर वह स्वस्थ होता दिखाई देता है। उदाहरण स्वरूप मानसिक रोग के लिए राग मल्हार, जयजयवंती, ललित, केदार आदि रागों का प्रयोग किया जाता है। डिप्रेशन में राग अहीर भैरव, उच्च रक्त चाप में राग आसावरी, मधुमेह में राग जयजयवंती, चिड़चिड़ेपन को दूर करने के लिये राग भैरवी, मानसिक असंतुलन में राग ललित, हृदय रोग के लिये राग शिवरंजनी और

सर्दी जुक़ाम के लिये राग मालकौंस सुनना उचित होगा। हर रोगी अपनी रूचि के अनुसार तेज़, हल्का गायन-वादन, शास्त्रीय संगीत, रॉक तथा पॉप सुनना पसंद करते हैं। ग्रामीण अंचल के लोगों का वहां के लोकसंगीत से अधिक मनोरंजन होता हैं। कुल मिलाकर तात्पर्य यह है कि संगीत योग और ध्यान के द्वारा हम अपने आपको प्रसन्न और तनाव रहित रखते हुये स्वस्थ रह सकते हैं और विभिन्न रोगों से छुटकारा भी पा सकते हैं।

संगीत में भावनाओं को जागृत करने, उन्हें परिष्कृत करने तथा संतुलन बनाने की भी प्रभावशाली क्षमता है। संगीत को ब्रह्म भी कहा गया है उसकी साधना से ईश्वर साक्षात्कार, मोक्ष और सिद्धि का मार्ग भी खुलता है। वेद मंत्रों की संरचना संगीत के स्वरों के आधार पर ही की गई है। इन वेद मंत्रों का प्रभाव तभी होता है जब उन्हें सुरताल में स्वरबद्ध और लयबद्ध कर गाया जाये, और यही कारण है कि वेदों और ऋचाओं को अलग-अलग रागों में बांधा गया है। संगीत में योग और रोगों का उपचार समाज में फैली हुई विकृतियों के शमन का मुख्य साधन बन चुका है। असामान्य परिस्थितियों में भी संगीत योग और आध्यात्म को अपनाकर जीवन के प्रति अपना दृष्टिकोण सकारात्मक बनाया जा सकता है।

कहने का तात्पर्य यह है कि संगीत केवल मनोरंजन का साधन ही नहीं वरन एक चिकित्सकीय औषधि भी है।

संदर्भ सूची -

1. संगीत चिकित्सा, संगीत विभाग पी.जी.कॉलेज, कानपुर वर्ष 2010

   'संगीत चिकित्सा' अभिनव सिन्हा, पेज-97

   'संगीत चिकित्सा' डॉ.बृजरानी शर्मा, पेज -103

2. 'मनोचिकित्सा विकिपीडिया', H.I.M.Wikipedia

3. 'संगीत चिकित्सा' प्रो.स्वतंत्र शर्मा, पेज -5

4. 'संगीत निबन्ध संग्रह' हेमंत कुमार जोशी पेज-94

•••

गुरुग्रंथ साहिब में संगीत विधान

*श्री रामलाल कुर्मी **

लेख सार

जगत में श्री गुरुग्रंथ साहिब का विशेष महत्व हैं। श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी के संगीत का विधान निराला व विलक्षण होने के कारण संगीत जगत् में विशेष महत्व रखता है। अपनी इस विलक्षणता के कारण यह संगीत-विधान गुरमति-संगीत के रूप में संगीत-जगत में, स्वतंत्र संगीत-पद्धति के रूप में अपनी अलग पहचान स्थापित कर चुका हैं।

गुरमति संगीत क्षेत्र में दर्जनों ही शोधार्थी पी-एच.डी. की उच्च डिग्रियाँ प्राप्त कर चुके हैं। दर्जनों ही इस कार्य-क्षेत्र से जुड़े हुए है। पंजाब की यूनिवर्सिटियों में एम.ए. संगीत श्रेणी में एक प्रश्न पत्र व पंजाबी यूनिवर्सिटी (पटियाला) में गुरमति संगीत वेयर गुरमति संगीत विभाग व एम.ए. व गुरमति संगीत का विषय भी सम्मलित हैं। अनेक शोधार्थियों ने गुरुग्रंथ साहिब से सम्बन्धित विषयों पर शोध कार्य किये गये है। स्वयं शोधार्थी के द्वारा भी इस विषय में शोध किया जा रहा है।

जगत में गुरुग्रंथ साहिब विशेष महत्ता रखता हैं। श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी के संगीत का विधान भी निराला व विलक्षण होने के कारण संगीत जगत् में विशेष महत्व रखता है। अपनी इस विलक्षणता के कारण यह संगीत-विधान गुरमति-संगीत के रूप में संगीत-जगत में स्वतंत्र संगीत-पद्धति के रूप में अपनी अलग पहचान स्थापित कर चुका हैं।

दरअसल गुरु साहिबान इस तथ्य से भली-भाँति अवगत थे कि, दार्शनिक विचारों की समझ लोगों के मन को संगीत के माध्यम से जल्दी व आसानी से समझ में आ जाती हैं। वर्तमान समय में मनोवैज्ञानिक भी इस मत के धारक हैं कि, यदि धर्म व गीत मिल जाए तो व्यक्ति की पशु वृत्ति को परिवर्तित करके अच्छी सोच विकसित कर देते हैं।

रागों की तरतीब - राग संगीत की बुनियाद हैं और संगीत के महत्व को गुरु साहिबान भली-भाँति जानते थे। सारी सूक्ष्म कलाओं में संगीत शिखर पर आता हैं क्योंकि यह मनुष्य को अवसाद से बचाता हैं। संगीत का प्रभाव ऐसा होता है कि, राह चलते राहगीरों के पाँव अपने आप रुक जाते है, पक्षी पंख मारना छोड़ देते है। जैसे कि, हमें पता ही हैं कि, गुरु नानक पातशाह के शब्द और भाई मरदाना की रबाव हमेशा अंग-संग रहे।

गुरमति संगीत - गुरु ग्रंथ साहिब जी गुरमति संगीत के भी भण्डार हैं। गुरमति संगीत भारत की अन्य संगीत पद्धतियों से कुछ भिन्न है तथा इसने अन्य संगीत पद्धतियों को बहुत कुछ दिया है। भारत में संगीत की यह किस्में प्रमुख है- हिन्दुस्तानी संगीत, कर्नाटक या दक्षिणी संगीत, इस्लामी सूफीआना (काफी) संगीत एंव गुरमति संगीत। गुरमति संगीत अन्य पद्धतियों से इसीलिए विलक्षण है कि, इस पद्धति में शब्द की प्रधानता है **'राग नाद सबदे सोहणे'**। यहाँ चौकियों की परम्परा है, अध्यात्मिकता को कलात्मकता से पहल है और अन्य तीन पद्धतियों से अच्छा मेल होने के बावजूद इसकी भिन्न पहचान भी हैं।

गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज राग तरतीब इस प्रकार है:

1. **राग सिरी राग**- श्री गुरु ग्रंथ साहिब का प्रथम राग यह सिरी राग हैं यह राग भारतीय परम्परा में सबसे प्राचीन माना

***शोध छात्र, रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)**

जाता हैं। गायन में यह सब से कठिन भी माना जाता हैं। इसके महत्व को भाई गुरदास जी ने इस प्रकार चित्रण किया है: **'रागन में सिरी राग पारस बखान है'।** इस राग के गायन का समय पिछले पहर का हैं इसे प्रथम राग का स्थान देने के पीछे गुरु पातशाह ने गुहज का प्रक्टाव किया हैं इस राग से सम्बंधित बाणी गुरु ग्रंथ साहिब के अंग 14 से 93 तक अंकित हैं।

2. **राग माझ**– इस राग की बाणी गुरु ग्रंथ साहिब के अंग 94 से 150 तक दर्ज है। यह राग पंजाब के इलाके माझा में विकसित हुआ प्रधान माना जाता है क्योंकि भारतीय संगीत में कहीं भी यह राग नहीं मिलता। माझा का भाव मध्य होता है। सो, इसका आध्यात्मिक अर्थ हैं मनुष्य के हृदय में से निकली हूक।

   गुरु अर्जुन साहिब की महत्वपूर्ण रचना 'बारह माहा' भी इसी राग में है। इस राग का सबंध पंजाब से होने के कारण किसी भगत की बाणी इस राग में नहीं है। इस राग के गायन का समय रात्रि का पहला पहर हैं।

3. **राग गउड़ी**– गउड़ी राग में बाणी गुरु ग्रंथ साहिब के अंग 151 से 346 तक दर्ज हैं। सबसे ज्यादा बाणी इस राग में दर्ज हैं। यह एक गंभीर प्रकार का राग है तथा इस में विरह की प्रधानता हैं। 'सुखमनि साहिब' एंव 'बावन अखरी' बाणियां इसी राग में दर्ज हैं।

4. **राग आसा**– सिक्ख धर्म में इस महत्वपूर्ण राग का गायन 'अमृत बेला' में किया जाता हैं इससे सम्बन्धित बाणी गुरु ग्रंथ साहिब के अंग 347 से 488 तक अंकित हैं। इस राग की महत्वपूर्ण रचना 'आसा की वार' का गायन नियम से किया जाता हैं। आसा राग की अन्य किस्में–काफी व बासावरी भी गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज हैं।

5. **राग गूजरी**– भारत का प्रसिद्ध राग गूजरी है तथा उत्तर व मध्य भारत में यह बहुत प्रसिद्ध हैं। इस राग के गायन का समय दोपहर का हैं। यह राग गुरु ग्रंथ साहिब के अंग 489 से 526 तक है।

6. **राग देवगंधारी**– इस राग की बाणी गुरु ग्रंथ साहिब के अंग 527 से 536 तक दर्ज हैं इसके गायन का समय चार घड़ी दिन चढ़े भाव दिन के दूसरे पहर हैं।

7. **राग बिहागड़ा**– यह राग गुरु ग्रंथ साहिब के अंग 537 से 556 तक दर्ज हैं। इसके गायन का समय अर्ध रात्रि का हैं। यह राग जुदाई व वियोग का प्रतीक हैं। जुदाई व वियोग ही परमात्मा से मिलाप का रास्ता खोलते हैं।

8. **राग वडहंसु**– वडहंस राग में बाणी गुरु ग्रंथ साहिब के अंग 557 से 594 तक अंकित हैं इस राग के गायन का समय दोपहर या अर्ध रात्रि माना गया हैं। खुशी भरी 'घोडीआ' वे दुख भरी 'अलाहुणीआ' इसी राग में गायन की गई है। इसकी एक किस्म वडहंस दखणी भी गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज हैं।

9. **राग सोरठि**– राग सोरठि सब से मनमोहक व सुखैन राग स्वीकार किया गया है, क्योंकि इसके सरल शब्द अपने–आप ही जिज्ञासु के मुख पर चढ़ जाते हैं। इसके गायन का समय रात्रि का दूसरा पहर निश्चित हैं। यह गुरु ग्रंथ साहिब के अंग 595 से 659 तक अंकित है।

10. **राग धनासरी**– राग धनासरी गुरु ग्रंथ साहिब के अंग 660 से 695 तक अंकित हैं। यह बहुत प्राचीन राग हैं। गुरु नानक पातशाह ने 'आरती' का गायन इसी राग में किया हैं। इस राग के गायन का समय दिन का तीसरा पहर निश्चित किया गया है।

11. **राग जैतसरी**– संस्कृत ग्रंथों में इस राग को जैसी या जयंत श्री नामों से लिखा गया हैं। गुरु ग्रंथ साहिब में इसे जैतसरी

राग के नाम से लिखा गया है। यह गुरु ग्रंथ साहिब के अंग 696 से 710 तक अंकित हैं, तथा इसके गायन का समय चौथा पहर निश्चित किया गया हैं।

12. **राग टोडी**- टोडी राग आमतौर पर राजा-महाराजाओं की स्तुति के लिए गाया जाता था। गुरु ग्रंथ साहिब में इस राग का गायन अकाल स्तुति के लिए किया जाता है, क्योंकि सिक्ख धर्म केवल प्रभु को ही सब का मालिक स्वीकार करता हैं। इस राग को गुरु ग्रंथ साहिब के अंग 711 से 718 तक दर्ज किया गया है। इस राग के गायन का समय दिन का दूसरा पहर निश्चित है।

13. **राग बैराड़ी**- बैराड़ी राग की जितनी किस्में मध्य-काल में प्रचलित थी, उतनी शायद किसी राग की नहीं थी। यह राग बहुत कठिन माना जाता हैं गुरु ग्रंथ साहिब के अंग 719 से 720 तक इसे स्थान दिया गया हैं तथा इसके गायन का समय दिन का चौथा पहर माना गया हैं।

14. **राग तिलंग**- गुरु ग्रंथ साहिब के अंग 721 से 727 तक तिलंग राग में बाणी दर्ज हैं। यह बहुत सरल राग हैं 'बाबरवाणी' के शब्द इसी राग में दर्ज हैं। इस राग के गायन का समय दिन का तीसरा पहर हैं। इसका एक रूप 'तिलंग काफी' भी गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज हैं।

15. **राग सूही**- सूही उत्साह व जोष का राग माना जाता हैं लेकिन प्राचीन भारतीय राग इतिहास में इसका जिक्र नहीं मिलता। इस राग से सम्बन्धित बाणी गुरु ग्रंथ साहिब के अंग 728 से 794 तक दर्ज है। इसके दो रूप-सूही काफी व सूही ललित गुरु ग्रंथ साहिब में अंकित हैं।

16. **राग बिलावल**- बिलावल राग प्राचीन भारतीय शास्त्री राग है। वैदिक धर्म के हर ग्रंथ में किसी न किसी रूप में इसका जिक्र मिलता हैं। यह राग मिलाप के पश्चात् प्राप्त खुशी का प्रकटीकरण हैं। गुरु ग्रंथ साहिब में इस राग की बाणी अंग 795 से 858 तक दर्ज हैं। इस राग के गायन का समय दिन का दूसरा पहर निश्चित हैं।

17. **राग गोंड**- यह बहुत ही प्रभावषाली राग माना जाता हैं। पुरातन कीर्तनकार इस राग को बिलावल के साथ मिला कर गाते थें। गुरु ग्रंथ साहिब में इस राग को अंग 859 से 875 तक अंकित किया गया हैं। इस राग के गायन का समय दिन का दूसरा पहर हैं।

18. **राग रामकली**- योगियों का यह सब से महत्वपूर्ण राग था। इस राग का संबंध करूणा से है। गुरु ग्रंथ साहिब में इसके तहित बाणी अंग 876 से 974 तक दर्ज हैं। इस राग के गायन का समय सूर्य चढ़ने से लेकर पहले पहर तक का है। महत्वपूर्ण बाणियां -सिंध गोसटि', 'अनंदु' व 'सदु' इसी राग में दर्ज है।

19. **राग नट नाराइन**- नट नाराइन राग के अधीन गुरु ग्रंथ साहिब का एक अन्य राग स्वरूप भी मिलता है, वह है नट। यह सम्पूर्ण जाति का राग हैं इस राग के तहत् बाणी गुरु ग्रंथ साहिब के अंग 975 से 983 तक दर्ज हैं। इस राग के गायन का समय रात का दूसरा पहर हैं।

20. **राग माली गउड़ा**- इस राग को गायन शैली में सब से कठिन राग माना जाता है। यह भी धारणा है कि, यह राग इस्लाम परम्परा की सूफी धारणा में से आया हैं इस राग से सम्बन्धित बाणी गुरु ग्रंथ साहिब के अंग 984 से 988 तक दर्ज हैं इस राग को खुशी व उल्लास की तरंगे पैदा करने वाला राग माना जाता हैं। खुशी व उल्लास भी वह जिनका सबंध दुनिया से नहीं, बल्कि ईश्वर से। यह राग दिन ढलते समय गाया जाता हैं।

21. **राग मारू**- मारू राग का संबंध जोश व बैराग दोनों से माना जाता हैं। इस राग का गायन समय दिन का तीसरा पहर

या ढलती दोपहर हैं। इस राग की बाणी गुरु ग्रंथ साहिब के अंग 989 से 1106 तक दर्ज हैं। इसके दो अन्य प्रकार- मारू काफी व मारू दखणी भी गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज है।

22. **राग तुरवारी**- तुरवारी राग का जिक्र भारतीय गायन शैली में नहीं मिलता। यह माना जाता है कि इस राग की रचना गुरु नानक पातशाह ने की। इस राग ने संबंधित बाणी गुरु ग्रंथ साहिब के अंग 1107 से 1117 तक अंकित है। इस राग का गायन समय दिन का चौथा पहर है।

23. **राग केदारा**- केदारा राग भारत का सुप्रसिद्ध राग है तथा भारतीय संगीत का अटूट अंग भी। इस राग में बाणी गुरु ग्रंथ साहिब के अंग 1118 से 1124 तक दर्ज है। इस राग का गायन समय रात्रि का पहला व दूसरा पहर हैं

24. **राग भैरउ** - भैरो राग भी भारतीय राग माला का एक अनमोल मोती हैं। इस राग में बाणी गुरु ग्रंथ साहिब के अंग 1125 से 1167 तक दर्ज है तथा इस राग के गायन का समय प्रात:काल है।

25. **राग बसंत**- मनुष्य का जन्म प्रकृति में से हुआ और यह वनस्पति की छांव में पाला गया, बढ़ा-फला एंव परवान चढ़ा। वनस्पति का खिलना, मनुष्य के भीतर नए रंग भरता है, क्योंकि बंसत ऋतु उल्लास की ऋतु है तथा ऋतुओं में इसे सब से महत्वपूर्ण स्थान भी प्राप्त है। इस सबंध में गुरु वाक्य है: इस राग की बाणी गुरु ग्रंथ साहिब के अंग 1168 से 1196 तक दर्ज हैं। इस राग को गायन का समय दिन का दूसरा पहर तथा बसंत ऋतु में किसी भी समय गाया जा सकता हैं इसकी एक किस्म बसंत हिंडोल भी गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज हैं।

26. **राग सारंग**- सदियों से भारतीय गायन का यह एक प्रमुख राग है। यह माना जाता है कि इस राग में सर्प भी मस्त हो कर नाच उठते है, भाव भटकते लोगो को यह राग शांति तथा शीतलता प्रदान करता हैं। गुरु ग्रंथ साहिब के अंग 1197 से 1253 तक इस राग से सबंधित बाणी दर्ज है। इस राग को गायन का समय दिन का तीसरा पहर हैं।

27. **राग मलार**- पुरानी भारतीय कहावत है कि, अगर 12 माह में से सावन का महीना निकाल दिया जाए, तो पीछे कुछ नहीं बचता। इसका भाव यह है कि, मनुष्य जीवन में सावन महीने का महत्वपूर्ण स्थान हैं इसीलिए मलार राग का गायन भी सावन व भादों के महीने में ज्यादा किया जाता हैं। वैसे यह राग रात के तीसरे पहर गाया जाता है पर वर्षा ऋतु में यह किसी समय भी गायन किया जा सकता है। गुरुग्रंथ साहिब के अंग 1254 से 1293 तक यह राग सुशोभित हैं। यह राग मनुष्य के भीतर छिपे हाव-भावों की तर्जमानी करता हैं।

28. **राग कानड़ा** - गुरु ग्रंथ साहिब के अंग 1294 से 1319 तक इस राग को स्थान दिया गया हैं। यह राग रात्रि के दूसरे पहर में गाया जाता हैं।

29. **राग कलिआण**- गुरु ग्रंथ साहिब में कानड़ा राग के बाद राग कलिआण को स्थान दिया गया हैं और यह अंग 1319 से 1326 तक अंकित हैं। कलिआण खुशी पैदा करने वाला राग हैं। कलिआण राग का गायन समय रात का पहला पहर है।

30. **राग प्रभाती** - 'आदि ग्रंथ' का आखिरी एंव श्री गुरु ग्रंथ साहिब का 30वां राग 'प्रभाती राग' है गुरु साहिब ने सिरी राग को सब से प्रथम स्थान दिया जो इस बात का प्रमाण है कि, जीव का सफर अंधकार में आरंभ होता है पर जैसे- जैसे वह गुरबाणी से एक सुर निकलता है तो उसके जीवन में प्रभात हो जाती हैं इसीलिए गुरु अर्जुन पातशाह ने इस राग को अंत में रखा। इसका गायन समय सुबह का पहला पहर है और गुरु ग्रंथ साहिब के अंग 1327 से 1351 तक इस राग में बाणी दर्ज है। गुरु ग्रंथ साहिब के राग भेद अनुसार प्रभाती बिभास,प्रभाती दखणी एंव बिभास प्रभाती भी

अंकित है।

31. **राग जैजावंती** – जीवात्मा सिरी राग से शुरू हुई और प्रभात तक पहुँची। प्रभात आत्मा एवं परमात्मा की एकसुरता का प्रतीक है। जिसकी प्रभात हो गई, उसकी जय-जयकार भी दोनों जहान में होती हैं। जैजावंती राग गुरु ग्रंथ साहिब का अंतिम राग है और गुरु ग्रंथ साहिब के अंग 1352 से 1353 तक इस राग में केवल गुरु तेग बहादुर साहिब की रचना दर्ज है जो कि, गुरु गोबिन्द सिंह जी ने बाढ़ में दमदमा साहिब के स्थान पर दर्ज की। इस राग का गायन समय रात का दूसरा पहर निश्चित किया गया हैं।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी के अंग 14 से 1353 तक सम्मिलित बाणी रागात्मक प्रबंध के अधीन संपादित की हुई हैं। श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी की संपादन-कला, काव्य-कला व संगीत-कला, संचार प्रक्रिया की दृष्टि से तीनों ही एक साथ चलते हैं। इस संगीत विधान के अंतर्गत आरंभ में ही कुछ महत्वपूर्ण संगीत-संकेत दिए हुए है। जो इस बाणी को उसके अनुसार गायन करने को हिदायत देते हैं इनमे राग, घरू, लोक धुनों, रहाऊ, पउड़ी, जति, पड़ताल आदि शामिल हैं। यह संगीत-संकेत जहां श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी के संगीत विधान को विलक्षणता प्रदान करते है वहीं इसके महत्व को भी उजागर करते है। इस धुर की बाणी के लिए प्रयोग किए गए प्रमुख रागों की गिनती तो 31 है पर उनके साथ ही 34 उपराग भी इस बाणी के उपदेशों को लोक मनों में बसाने के लिए प्रयोग किए हुये मिलते है। इस संगीत-विधान के अनुसार जो राग प्रयोग में लाए गए हैं उनका क्रम इस प्रकार की भारतीय संगीत परंपरा को स्वीकृत करके नहीं चलता। इसलिए यह पावन ग्रंथ मात्र संगीत ग्रंथ नहीं हैं। इसका संगीत-विधान 'सुर की बाणी' के अंतर्गत कार्य करता हैं। इस संगीत-विधान में प्रमुखता बाणी संदेश की है। संगीत इस कार्य को सफल करने का केवल एक साधन मात्र ही हैं इसलिए गुरबाणी में प्रयोग की गयी लोक धुनों को भी बाणी-संदेश को संचार करने के लिए ही प्रयोग किया गया हैं। यह लोक धुनें पूर्व-नानक काल में राजा-महाराजा, ठाकुरों, शासकों व अन्नदाता को खुश करने के लिए गाई जाती थी। पर गुरु साहिबान ने इनके प्रयोग दुनियावी शासकों को खुश करने की जगह आम आदमी को मानव-गुलामी की जंजीरों से मुक्त करके प्रभु की स्तुति करने व व्यक्तिगत जीवन को खुशहाल बनाने के लिए किया।

सन्दर्भ –

1. सिक्ख धर्म अध्ययन: डॉ. जसबीर सिंघ साबर
2. श्री गुरु ग्रंथ साहिब: डॉ. सरूप सिंघ अलग
3. प्रमुख संत कवि: मिश्र रामप्रसाद
4. गुरु नानकदेव जी: डॉ. गिरिराज षरण अग्रवाल
5. श्री गुरुगंथ के बाणीकार: डॉ. राजेन्द्र सिंह 'साहिल'

•••

चिकित्सा के क्षेत्र में रंगों का मनोवैज्ञानिक प्रयोग

*डॉ. एडलिन अब्राहम **

शोध सार

रंग हमारे जीवन का अभिन्न अंग है। रंगों का मानव जीवन के साथ इतना गहरा संबंध है, कि बेरंग दुनिया में मानव खुशियों को अनुभव भी नहीं कर सकता। रंगों के माध्यम से ही प्रकृति की हरियाली से लेकर सूरज की सुनहरी रोशनी आसमान का नीलापन बादलों की काली घटायें और चन्द्रमा का उजलापन देख पाते है। बादलों में खिंचती सात रंगों की इंद्रधनुषी रेखा सुन्दर कहानी बयां करती है। जिसे देखकर मन रंगीन दुनिया का हिस्सा बन जाता है। मनुष्य के बहुरंगी जीवन में रंगों की एक निश्चित भूमिका होती है। रंग मनुष्य के मस्तिष्क पर गहरा असर डालते है आधुनिक मनौवैज्ञानिकों की मान्यता है कि रंगों की पसंद व प्रभाव से मनुष्य की जिन्दगी का पूरा समीकरण प्रभावित होता है। रंगों की इस ताकत ने उसे उपचार के लिये भी उपयोगी बना दिया है। कई सारी बीमारियाँ है, जिनके उपचार के लिये रंगों का उपयोग किया जाता हैं। इन खूबियों के कारण ही इसे कलर थेरेपी का नाम दिया है।

रंग चिकित्सा वैकल्पिक चिकित्सा का एक रूप है, जिसमें शरीर, मन आत्मा को स्वस्थ रखने के लिये रंगों का उपयोग किया जाता हैं। रंग चिकित्सा की अवधारणा एकदम नई नही है। प्राचीन समय में मिश्र, चीन तथा भारत में रंगों के प्रभाव का अध्ययन किया गया था। ऐसे संकेत प्राचीन साहित्य में उपलब्ध है।

उन्नीसवी सदी में कुछ मनौवैज्ञानिकों ने नये सिरे से अनुसंधान किये जिसके परिणाम स्वरूप मानव पर रंगों के प्रभाव से सम्बंधित रोचक परिणाम सामने आये है। प्रत्येक रंग मनुष्य पर भिन्न-भिन्न प्रभाव डालता है।

इस विषय पर शोध कार्य अनवरत जारी है। वर्तमान में मलेशिया, इस्लामाबाद और एक अमेरिकन के द्वारा रंग चिकित्सा के क्षेत्र में प्रयोग किये जा रहे है। जिनमें उन्होनें कैंसर, लकवा, और शुगर व थायराइड की बीमारी में सफल प्रयोग किये है। इस्लामाबाद पाकिस्तान के श्री सैयद गुल मुहम्मद जो पेशें सें रंग चिकित्सक है। जो अपने देश के अतिरिक्त विभिन्न देशों में जाकर भी अपनी सेवाएँ देते है।

इस ब्रम्हाण्ड में हम अपनी आँखों से जो भी देखते हैं उनमें सबसे पहले रंग का प्रभाव पड़ता है। सृष्टि में अनेक प्रकार के रंग पाये जाते हैं जिनसे ये अधिकांश रंग ऐसे होते हैं जिन्हें हम और आप आसानी से पहचान सकते हैं।

जैसे लाल, पीला, नीला, हरा इसके अलावा कुछ रंग ऐसे होते हैं जिसे आम आदमी आसानी से नहीं पहचान सकता, जिन रंगों को आसानी से नहीं पहचाना जा सकता उन रंगों को आम, फूल, फल, सब्जियों को नाम से जानने की कोशिश करता है। अधिकतर ऐसा ग्रामीण इलाकों में देखने मिलता है- जैसे जामुन, नारंगी, नींबू इत्यादि और कुछ रंग ऐसे होते हैं जो भ्रम उत्पन्न करते हैं। जिन्हें हम धूप-छाया का रंग कहते हैं।

रंग मन और आत्मा की औषधि है और इसलिए रंग विभिन्न शारीरिक और मानसिक रंगों का प्रतिरोध करने की क्षमता रखते है मनुष्य जीवन में रंगों का महत्वपूर्ण स्थान है। रंग पूर्णत: प्रकाश और दृष्टि पर निर्भर तत्व है। एक की भी अनुपस्थिति रंग के ज्ञान में बाधक सिद्ध होती है। प्रत्येक वस्तु का कोई न कोई रंग अवश्य होता है वस्तुत: वस्तुओं की

***सहायक प्राध्यापक, श्री गुरु तेग बहादुर खालसा कॉलेज, जबलपुर (म.प्र.)**

पहचान उनमें धरातलीय रंग के कारण ही होती है प्रत्येक प्रकाश की मात्रा के कम या अधिक होने से एक ही रंग की वस्तुएं अलग-अलग दिखायी पड़ती है।

प्रकाश किरणें पदार्थ पर पड़कर समाहित होने के पश्चात् पुनः परावर्तित होकर प्रकाश को वापस कर देती है जो प्रकाश वापस आता है उसमें आभा वर्ण तथा अन्य गुण होते हैं जो दर्शक के अक्षपटल पर पडते हैं और वस्तुएँ रंगीन दिखाई देती हैं। अक्ष पटल के पास ही शालिकाऐं और शंक नाम की सूक्ष्म तंत्र ग्रथियाँ होती है जिनके द्वारा हम वस्तुओं को परावर्तित प्रकाश तरंगों से वस्तु के वर्ण का ज्ञान करते हैं। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि वर्ण प्रकाश का गुण है कोई सबूत वस्तु नहीं है। इसका कोई स्वतः का अस्तित्व नहीं है बल्कि अक्षपटल पर मस्तिष्क पर पड़ने वाला एक स्वभाव है। वर्ण स्थूल वस्तु नहीं है। इसका मूल कारण सूर्य का सतरंगी प्रकाश है। रंग प्रकाश तथा वस्तु की स्थिति दर्शक की ग्राहय स्थिति पर निर्भर करता है रंगों का अध्ययन भौतिक विज्ञान तथा मनोविज्ञान के अन्तर्गत आता है।

रंग मानवीय जीवन में विविध अनुभूतियों एवं संवेदनाओं का पर्याय है मनुष्य की दुनिया भी विविध रंगों से बनी है, मनुष्य का शरीर भी विविध रंगों से निर्मित है। उसी मानसिक व शारीरिक स्थिति का द्योतक है। रंगों का यह संतुलन प्रकृति अर्थात ईश्वर प्रदत्त होता है। इसमें गडबड़ी या असंतुलन होने पर मनुष्य अस्वस्थ्य हो जाता है। तब विविध उपचार या चिकित्सा पद्धित के माध्यम से इन रंगों को संतुलित कर मनुष्य को स्वस्थ्य बनाने का प्रयास किया जाता है। यह चिकित्सा वैकल्पिक चिकित्सा के अंतर्गत आती है। जिसे ''क्रोमो थेरेपी'' (Chromo Therapy) कहा जाता है इस थेरेपी के संबंध में डॉ. ब्रेलिंग ने कहा है - Colur is one of the language of the soul just look at Inspired or meditation painting they influence our mood and emotions. (रंग आत्मा की वह भाषा है जो केवल प्रोत्साहन और ध्यान को चित्रित करती है। वे हमारे इच्छा और भावनाओं में हस्तक्षेप करती है)

पृथ्वी पर ऊर्जा का प्रमुख स्त्रोत सूर्य है। न्यूटन ने रंग की उत्पत्ति सूर्य के प्रकाश से ही मानी हैं। सूर्य के प्रकाश से सात रंगों की अलग-अलग तरंगें आती है। हर रंग की अपनी अलग कंपन आवृत्ति है और यह हमारे शरीर के अलग-अलग अंगों के साथ विशेष रूप से जुड़ा होने के कारण उन सब पर विभिन्न संयोजन में मिलकर विशेष प्रकार से प्रभाव डालता है। मनुष्य की सभी कोशिकायें रंगीन है। शरीर का कोई अंग बीमार होता है, तो उसके रासायनिक द्रवों के असंतुलन के साथ-साथ रंगों का भी असंतुलन हो जाता है। इन रंगों को रंग चिकित्सा संतुलित कर देती है। जिसके कारण रोग का निवारण हो जाता है। प्रकृति का यह नियम है कि जो चिकित्सा जितनी स्वाभाविक होगी, उतनी ही प्रभावशाली भी होगी और उसकी प्रतिक्रिया भी न्यूनतम होगी। रंग चिकित्सा जितनी सरल है उतनी कम खर्चीली भी है।

रंग चिकित्सा की प्रमुख तीन विधियाँ है-

प्रथम विधि में रंगीन काँच की बोतल में जल अथवा शहद 3/4 भाग में भरकर ऊपर रूई लगाकर ढक्कन बंद करके लकड़ी के टुकड़े (बिना पेंट पॉलिश के) सूर्य के प्रकाश में सुबह से शाम लगातार 15 दिन रखा जाता है।

द्वितीय विधि में तैयार दवा का सेवन नहीं किया जाता पर तैयार दवा को रोग के स्थान पर बाहर से लगाया जाता है। इस विधि में तेल तथा घी का प्रयोग किया जाता है। इसे उपरोक्त विधि द्वारा तैयार किया जाता है परन्तु इसे तैयार होने में 45 दिन का समय लगता है, तथा इसका इस्तेमाल 1 वर्ष तक किया जा सकता है।

तृतीय विधि में रंगों को सीधे शरीर पर लगाकर बीमार व्यक्ति को सूर्य के प्रकाश में लिटाया जाता हैं।

हमारे शरीर में रहने वाली वस्तुओं का तीन चौथाई भाग ऑक्सीजन का है, शेष अन्य पदार्थों का चिकित्सकों ने

वैज्ञानिक अन्वेषण के पश्चात विभिन्न रंगों के जो पदार्थ पाये जाते हैं उनका वर्णन सूर्य चिकित्सा विज्ञान में किया है, सूर्य चिकित्सा विज्ञान आचार्य राम शर्मा जी द्वारा इस प्रकार है–

गहरे बैंगनी रंग – हाइड्रोजन, कैल्सियम और एल्यूमिनियम,

सुन्दरता और रचनात्मकता का प्रतीक बैंगनी रंग ठंडा होता हैं। इसमें नींद बहुत अच्छी तरह से आती है। बैंगनी रंग खून के अंदर मौजूद लाल रक्त कण बढ़ाते है, तथा क्षयरोग नाशक है। यह रंग सिर्फ आत्मिक स्तर पर काम करता है लियोर्नाडो द विन्ची ने एक बार कहा था, 'आप बैंगनी रोशनी के बीच योग करें तो आपकी योग शक्ति दस गुणा बढ़ जाती है।' यह रंग विचारों को शुद्ध करता है। श्वांस रोग, सर्दी, खाँसी, मिर्गी दाँतों के रोग आदि में सहायक है।

हरे रंग में – ऑक्सीजन, नाइट्रोजन, कार्बन सोडियम, कैल्सियम, बेरियम, मैग्नीशियम, क्रोमियम निकल और जस्ता है।

समृद्धि आत्म नियंत्रण व संतुलन के लिये हरा रंग न ज्यादा गर्म न ज्यादा ठंडा होता है। ये रंग आँखों को ठंडक पहुँचाता है इसमें शारीरिक व आध्यात्मिक दोनो तरह के प्रभाव डालने की क्षमता होती है। यह स्नायु रोग, नाड़ी संस्थान के रोग, लीवर के रोग, हिस्टीरिया रोग में लाभदायक होता हैं।

पीले रंग में – नाइट्रोजन, कार्बन, ऑक्सीजन, कैल्सियम, बैरियम, कोबाल्ट लोहा, निकल, जस्ता, ताँबा

समझदारी, स्पष्ट सोच एवं बुद्धि का प्रतीक यह रंग ताजगी उत्साह, स्फूर्ति और शीतलता प्रदान करता है इसका सबसे ज्यादा प्रभाव हमारे दिमाग और बुद्धि पर पड़ता है, चोट, घाव, रक्त स्त्राव दिल के रोग आदि में लाभदायक है।

लाल रंग में – नाइट्रोजन, ऑक्सीजन, जस्ता, बैरियम, कैंडमियम, रूबीडियम आदि।

हिम्मत जोश, ऊर्जा का प्रतीक लाल रंग बहुत ज्यादा गर्म होता है। सर्दी के कारण होने वाले रोगो में तथा शरीर के निर्जीव भाग में चेतना प्रदान करने में बहुत उपयोगी है। इसका उपयोग केवल मालिश के लिये होता है। आयरन की कमी व खून की कमी से जुड़ी दिक्कतों में इसका इस्तेमाल किया जाता है। यह सिर दर्द में भी लाभकारी है।

नारंगी रंग में – कैडमियम, स्ट्राशियम, ताँबा, लोहा, कैल्शियम, नाइट्रोजन, ऑक्सीजन, हाइड्रोजन।

सूर्य के प्रकाश में रखी सफेद रंग की बोतल का पानी साधारण पानी की तरह हर समय लिया जा सकता है। इसमें कैल्शियम और पौष्टिक तत्व मिलते हैं। यह सात रंगों का मिश्रण है।

खुशी आत्मविश्वास सम्पूर्णता नारंगी रंग लाल रंग से कम गर्म होता है। यह स्नायु और खून को उत्तेजित करता है दमे के रोगियों के लिये नारंगी रंग बहुत उपयोगी है। यह आरोग्य तथा बुद्धि का प्रतीक है। यह वात रोग, अम्ल पित्त अनिन्द्रा व कान के रोगों को दूर करता है।

जल कैसे तैयार करें– सूर्य तत्व जल की दवाई तैयार करने के लिए जिस रंग का पानी तैयार करना हो तो उस रंग की बोतल को तीन भाग स्वच्छ जल सें भरकर लकड़ी के पटे पर काक लगाकर ऋतु के अनुसार एक से तीन दिन तक प्रात: से सायं धूप में रखें। अलग–अलग रंगों की बोतलों की छाया एक दूसरे पर न पड़े। पानी फ्रिज या बर्फ का न हो। तेल बनाने के लिए नीले रंग की बोतल में सरसों या नारियल का तेल ठंड पहुँचाने के लिए और लाल रंग की बोतल में अलसी या तिल का तेल गर्मी पहुँचाने के लिए बनाया जाता है। यह भी 25 से 50 दिन में तैयार होने पर इस्तेमाल करें। इस प्रकार सूर्य चिकित्सा के माध्यम से रंगों के पानी व तेल का प्रयोग का स्वस्थ जीवन का लाभ उठाया जा सकता है।

इन पद्धतियों के अलावा एक अन्य और चिकित्सा पद्धति हैं जो एक्यूप्रेशर नामक चिकित्सा पद्धति के साथ की जाती है जो अत्याधिक प्रचलित हैं। जिसमें दबाब बिन्दु में रोगों से संबंधित रंगों को लगाया जाता है। इनकी अवधि 24 घन्टा से लेकर एक माह तक की एवं गंभीर बीमारी में और अधिक समय लगता है। हमारे शरीर में अनेक दबाब बिन्दु (प्रेशर पाइंट) पाये जाते है जो प्राकृतिक रूप से रोगों से लड़ने अथवा बचाव के लिए ईश्वर ने दिये है। जिनका संबंध रंगों से भी होता है। इसी का लाभ लेते हुए इस चिकित्सा पद्धति का उपयोग किया जाता है।

इसमें दवाई व इंजेक्शन लेने की आवश्यकता नहीं होती है एवं यह सबसे सस्ती पद्धति है। जिसमें रंगीन पेन का इस्तेमाल किया जाता है। भारत जैसे गरीब देश के लिए सबसे ज्यादा उपयोगी हैं। इस क्षेत्र में युवाओं को कैरियर के रूप में चुनना चाहिए, जिससे हर छोटी से छोटी जगह पर चिकित्सा उपलब्ध हो सके।

रंगों का असंतुलन होते ही शरीर में रोग के बने रहने की संभावना बनी रहती है। अत: एक अनुभवी चिकित्सक को इस बात की विशेष जानकारी होना चाहिये कि बीमारी में किस रंग का कब और कितने समय देर तक प्रयोग किया जाना चाहिये। जिसके बाद की वांछित सफलता की संभावना बढ़ जाती है। इसलिये सफेद रंग चिकित्सक के चयन के पूर्व उनकी योग्यता पूर्व अनुभव और प्रतिष्ठा आदि की पूरी जानकारी प्राप्त करना चाहिये।

इस प्रकार हमने देखा रंग चिकित्सा अत्यन्त ही सरल कम खर्चीली और अत्याधिक लाभकारी है। वर्तमान समय के भौतिकवादी युग में बढ़ती आकांक्षा एवं आवश्यकताओं के कारण मानव इसका शिकार होते जा रहे हैं। जीवन संघर्ष है। जीवन पथ पर अनेक चुनौतियाँ हैं। इन चुनौतियों पर विजय पाने के लिए सुदृढ़ एवं संतुलित स्वास्थ्य अति आवश्यक है।

संदर्भ ग्रन्थ -

1. शर्मा, एस. के.अग्रवाल, आर. ऐ. रूपप्रद कला के मूलआधार, इन्टरनेशनल पब्लिकेशन हाऊस।
2. गैरोला, वाचस्पति, भारतीय चित्रकला, इलाहाबाद, वर्ष 1963.
3. गिरधर मिस्त्री, रंग चिकित्सा
4. खन्ना, नवीन- रंग और आप, प्रकाशन अनुपम बुक्स दिल्ली, वर्ष1986
5. लाला रामस्वरूप- पंचांग 2015
6. स्वयं के अनुभव के आधार पर

•••

भारतीय षडंग : चीनी चित्रकला के मूलाधार

*श्री साजन कुरियन मैथ्यू **

लेख सार

चित्रकार सतत् अभ्यास के बल पर एक ऐसी प्रविधि एवं विधान को जन्म देता है, जो उसके भावों, संवेदनाओं तथा अनुभवों के प्रकाशन में सशक्त माध्यम बन सके। उसने रंगों की तकनीक में निरंतर विकास किया हैं। तूलिका निर्माण के नये-नये तरीके सुझाये है। धरातल की तैयारी में भी नये-नये प्रयोग किये है। संसाधनों की तकनीक एवं चित्र संयोजन के विकास क्रम में युग-युगान्तर से कितने अनुभव व ज्ञान संचित किये है। भारतीय शिल्प में शैलीगत तत्वों के अनेक संदर्भो का भारतीय शिल्पशास्त्रों एवं साहित्य में उल्लेख मिलता है। समरागण सूत्रधार, विष्णु धर्मोत्तर पुराण, शिल्परतनम् आदि शिल्पग्रन्थों में तथा संस्कृत साहित्य में कला तत्वों के अनेक उल्लेख मिलते है। 11वी.-12वी. शती में कला मनीषी शिल्पाचार्य यशोधर पंडित द्वारा रचित जयमंगला में चित्रकला के छः अंगों (षडंग) का उल्लेख किया है, यथा

रूपभेदाः प्रमाणानि भाव लावण्ययोजनम्।

सदृष्यं वर्णिकाभंग इति चित्र षडगम्।।

प्राच्य कला, विशेषकर चीनी चित्रकला के प्रशस्त साहित्य में ''ताओ'' अथवा ''मार्ग'' का निरन्तर उल्लेख मिलता है। यह कोई व्यक्तिगत मार्ग नहीं है और न ही किसी शिक्षण पद्धति की रीति-नीति। अनेक मार्गो में से एक, चित्रकला की सार्वभौमिक भाषा में से एक, यह ''ताओ'' किन्हीं मूलभूत धारणाओं की विशिष्ट रीति है जिसे प्राचीन काल से तूलिका और स्याही के माध्यम से अभिव्यक्त किया जाता रहा है। ताओ की अभिव्यक्ति ही प्राच्य कला का चरम लक्ष्य रहा है, इस मूल मंत्र का भारतीय षडंग ही आधार है।

धर्म की तरह कला भी आन्तरिक सत्य को प्रकाशित करती है। कलाकार आन्तरिक गुण का ही प्रत्यक्षीकरण करता है, बाह रूप का नहीं। इस दृष्टि से कलाकार की समानता रहस्यानुभवी से की जा सकती है लेकिन रहस्यानुभवी जीवन में सम्पूर्णता की खोज करता है जबकि कलाकार बन जाता है सर्जक। सर्जन आत्मा और विषय के काल्पनिक संयोग का ही परिणाम है।

प्रत्येक सर्जन में उसी प्रकार भेद होता है जिस दृष्टि से कलाकार स्वयं को सर्जक के रूप में देखता है, अनुभवों को रूपान्तिरत करता है तथा जिस प्रकार के चरम सत्य को वह प्रतिबिम्बित करना चाहता है। जब तक ईश्वर, प्रकृति और मानव के तात्विक सिद्धान्तों का ज्ञान नहीं हो जाता अथवा प्राच्य कलाकार जिसे स्वर्ग, पृथ्वी और मनुष्य कहते है, तब तक हम किसी कला और संस्कृति का अनुभव नहीं कर सकते।

प्राच्य कला, विशेषकर चीनी चित्रकला के प्रशस्त साहित्य में ''ताओ'' अथवा ''मार्ग'' का निरन्तर उल्लेख मिलता है। यह कोई व्यक्तिगत मार्ग नहीं है और न ही किसी शिक्षण पद्धति की रीति-नीति। अनेक मार्गो में से एक, चित्रकला की

***विभागाध्यक्ष, व्यवहारिक कला एवं ऐनिमेशन, राजा मानसिंह तोमर कला एवं संगीत विश्वविद्यालय, ग्वालियर, (म.प्र.)**

सार्वभौमिक भाषा में से एक, यह ''ताओ'' किन्हीं मूलभूत धारणाओं की विशिष्ट रीति है जिसे प्राचीन काल से तूलिका और स्याही के माध्यम से अभिव्यक्त किया जाता रहा है। ताओ की अभिव्यक्ति ही प्राच्य कला का चरम लक्ष्य रहा है और इस मूल मंत्र का आधार है प्रकृति में व्यवस्था और सामंजस्य।

चुआंग त्सू का कथन है कि ''ताओ'' की अभिव्यक्ति शब्दों अथवा मौन द्वारा नहीं की जा सकती। उसके भावातीत स्वभाव को उसी व्यवस्था में अनुभव किया जा सकता है। जब न वाणी रहे और न मौन का अस्तित्व। चित्र सृजन को इसी व्यवस्था का प्रत्यक्षीकरण कहा जा सकता है जो कि न तो वाणी है और न मौन। इस प्रकार प्राच्य चित्रकला विशेष रूप से अपने गतिशील तूलिकाघातों तथा आश्चर्यजनक सांकेतिक शक्ति के कारण ''ताओ'' को संचारित करने का प्रभावशाली माध्यम है।

प्राच्य देशों में चित्रकला कभी भी जीवन के ''ताओ'' से अलग नहीं रही। इसका मुख्य लक्ष्य था प्रकृति की व्यवस्था अथवा प्रकृति के कार्य करने की पद्धति का निरूपण जिसका संकेत न केवल परोक्ष रूप से शास्त्रों में बल्कि चित्रकला संबंधी चर्चाओं में स्वर्ग और पृथ्वी के आदर्श सामंजस्य में मिलता है जोकि सभी अभिव्यक्तियों के मूल में निहित है। आत्मा के साथ विलयन का यह उद्देश्य स्वर्ग, पृथ्वी और मनुष्य के पारस्परिक सामंजस्य से जुड़ा हुआ है। जो कि कलाकार एवं कलाकृति के विकास को सूचित करता है। तथा जिसकी सफल परिणति के लिये परिज्ञान के अभ्यास तथा तकनीकी कुशलता के साथ-साथ वस्तु के आन्तरिक स्वभाव तथा बाह्य रूप को प्रतिबिम्बित करने की योग्यता भी आवश्यक है।

जीवन सत्व एवं चेतनत्व का संचरण चित्र में ''ताओ'' की उपस्थिति का सूचक है। कलाकार जब आत्मा को पूरी तरह आत्मसात कर लेता है तो अन्य सभी वस्तुएँ उसका अनुसरण करती है लेकिन यदि वह आत्मा को खो देता है तो किसी प्रकार की सजावट, कुशलता अथवा विशिष्ट योग्यता भी उसकी कृति को निष्प्राण होने से नहीं बचा सकती। इस आन्तरिक रहस्य को पारिभाषित करने के लिये चीनियों ने स्वयं अथक रूप से लिखा है। पांचवी शती के प्रसिद्ध चीनी कला आलोचक शिय हो ने अपने ग्रंथ ''कू हुआ पिन लू'' में चित्रकला के मूल्यांकन के लिये छः नियमों का प्रतिपादन किया था जो कि पिछली पीढ़ियों के चित्रकारों की साधना के सार थे तथा आगामी कई शताब्दियों तक आधारभूत सिद्धान्तों के रूप में चित्रकारों का मार्ग दर्शन करते रहे। समकालीन चित्रकला की वर्तमान अवस्था का आलोचनात्मक परीक्षण करने से यही प्रकट होता है कि अधिकांश सिद्धांतों का आज भी आधुनिक चित्रकारों द्वारा रूपान्तरण किया जाता है। यदि हम अपने समय की कला के इतिहास की सर्वाधिक अप्रतिहत कला परम्परा की मान्यताओं के साथ साक्षात्कार करें तो हम अपनी उपलब्धियों के वस्तुनिष्ठ मूल्यांकन करने में समर्थ हो सकेंगे।

शिय हो द्वारा प्रतिपादित चित्रकला के छः सिद्धान्तः

1. छी युन शंग तुंग – प्राण छंद
2. कू फा युंग पी – तूलिका द्वारा आकार सृजन
3. यिंग वू श्यांग शिंग – वस्तु के अनुसार रूपांकन
4. स्वे लेई फू छाई – वस्तु के स्वभाव के अनुसार रंग का प्रयोग
5. चिंग यिंग वेई टू – संरचना में तत्वों का उचित स्थान पर संयोजन

6. छ्वान मोई शिय – अनुकृति द्वारा तात्विक गुणों का रूपान्तरण

प्रथम सिद्धान्त उस विचार धारा का सार है जिसके अनुसार आत्मा सम्पूर्ण प्रकृति को जीवन तत्व प्रदान करती है। तथा गति और परिवर्तन के क्रम को संधृत करती है और यदि कलाकृति में आत्मा है तो वह अनिवार्य रूप से जीवन की चेतना शक्ति को वस्तुओं में गतिशील है तथा उन्हें सामंजस्यतापूर्ण एकता प्रदान करती है। कलामर्मज्ञों ने चीनी शडंगों के प्रथम सिद्धान्त को सर्वाधिक महत्व दिया है तथा उसकी व्याख्या निम्न प्रकार से की है:-

"Rhythmic vitality or spiritual rhythm expressed in life movement". **-Laurence Binyon**

"Circulation of spirit produces movement of life". **-Mai-mai Sze**

"Through a vitalizing spirit, a painting should possess the movement of life". **-Shio Shakanishi**

"The life - movement of the spirit through the Rhythm of Things". **-Okakura**

"Spiritual Element: Life's motion". **-F.Hirth**

दूसरे सिद्धान्त के अनुसार तूलिका ही आकार और ढांचे के प्रदर्शन, लक्ष्य और माध्यम की सिद्धी, आदर्श और रूप से प्रतिनिधित्व और आध्यात्मिक पक्ष की अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम है। तूलिकाघात अपने आप में इतने स्पष्ट हों कि वे प्रथम सिद्धान्त में वर्णित लौकिक स्फूर्ति के प्रवाह को वहन करने में समर्थ हो सकें। पहले दो सिद्धान्तों की महत्ता को स्पष्ट करते हुये प्रसिद्ध चित्रशिल्पी वांगवेई कहते है कि चित्रों का निर्माण केवल तूलिका के कुशल परिचालन से नहीं बल्कि आत्मा के पूर्ण अवगाहन द्वारा होता है।

तीसरा सिद्धान्त इस बात का संकेत करता है कि प्रत्येक वस्तु का अपना निजी रूप होता है। शिल्पी को विषयवस्तु तथा अभिव्यंजना के बीच तादात्म्य स्थापित करना चाहिये ताकि वह दर्शक के कल्पना जगत में वस्तु के सारूप्य को अपने पूर्ण पृथकत्व एवं स्थायित्व के साथ प्रकट कर सके। चित्र में रंगों का उपयोग इस तरह हो कि वे वस्तु के स्वभाव को प्रदर्शित कर सके। यही चौथे सिद्धान्त का आधार है। पाँचवा सिद्धान्त, संरचना में तत्वों के उचित संयोजन को आवश्यक समझता है। संरचना में स्पष्ट परिलक्षित होना चाहिये कि कौन-सा तत्व सबसे अधिक अथवा कम महत्वपूर्ण है इसके साथ ही अन्तराल या स्पेस का समुचित नियोजन भी आवश्यक है। अनेकता में एकता ही सम्पूर्ण सामंजस्य का ताओवादी सिद्धांत है।

छठवां सिद्धान्त उस परम्परावादी विचार से संबंधित है जिसके अनुसार प्राचीन शिल्पियों की रचनाओं का सारत्व तथा चेतनत्व का अवगाहन पीढ़ी दर पीढ़ी होना चाहिये। इसका अर्थ है कि बाह्य रूप से अधिक महत्वपूर्ण है जीवन – सत्य का रूपान्तरण।

उपरोक्त छ: सिद्धान्तों में प्रथम दो सिद्धान्त सबसे महत्वपूर्ण है क्योंकि आधुनिक अमूर्त चित्रकला इनके अनुरूप ही है। इन छ: सिद्धान्तों के अलावा चीनियों में छ: गुणों की भी विस्तृत चर्चा की है जो कि मूल सिद्धान्तों के ही परिणाम है तथा उनका सामान्य तात्पर्य यही है कि आत्मा मौलिक व्यक्ति के रूप में सभी सिद्धान्तों और पद्धतियों में प्रवाहमान है – तूलिकाघात तब तक शक्तिसम्पन्न नहीं हो सकते जब तक यह ऊर्जा उनमें संचारित नहीं होती।

छः आवश्यक तत्व :

1. आत्मा का आवेग तथा सशक्त तूलिकाघात साथ-साथ चलते हैं।

2. मौलिक अभिप्राय परम्परा के अनुरूप होना चाहिये।

3. मौलिकता के कारण वस्तुओं के सारत्व की उपेक्षा नहीं करनी चाहिये।

4. रंग का यदि उपयोग किया जाए तो समृद्धता से।

5. तूलिका संचालन सहज हो।

6. उस्तादों से सीखो लेकिन उनकी गलतियों का त्याग करो।

एक प्रसिद्ध चीनी शिल्पी से एक बार पूछा गया कि वह चित्रांकन करते समय अपनी स्याही लगी उंगलियों को तूलिका के बालों में इतना गहरा क्यों गड़ाते है। शिल्पी ने उत्तर दिया कि इसी प्रकार वे प्राण छन्द को अपने हाथों में तूलिका के द्वारा कागज पर प्रवाहित होते हुये प्रतीत कर सकते है।

कार्यरत प्राच्य कलाकार की चित्तवृत्ति गहरे ध्यान में अभिमंत्रित रहती है। चित्रण आरम्भ करने के पहले वह सौम्य - शान्त हो जाता है - कुछ समय के लिये एकाग्र होकर आत्म-केन्द्रित हो जाता है। इस तरह सृजन कार्य के लिये वह तैयार हो जाता है- इसका अर्थ है कि लोकातीत सक्रियता के लिये, कलाकृति के सृजन के लिये मार्ग तैयार करने हेतु वह स्वत: को खाली कर देता है। शुक्राचार्य द्वारा रचित ''शुक्रनीति सार'' के प्रतिमा निर्माण संबंधी अध्याय से एक अंश यहां उद्धृत किया जाता है - ध्यान के द्वारा ही देवताओं के योग्य प्रतिमा का निर्माण किया जा सकता है। योग साधना की सिद्धी के लिये ही प्रतिमाओं के लक्षण निर्देशित किये गये है। प्रतिमाकार को चाक्षुष - चिन्तन में निष्णात होना चाहिये''।

प्रारंभिक ध्यान शिल्पियों के मन को उत्तेजित होने से रोकता है। यह एक तरह से मानसिक संतुलन की वह अवस्था है जिसमें मन अपने समीप के परिवेश को भूलकर दूसरे जगत में पहुँच जाता है, और यही सबसे प्रकृतस्थ अवस्था है। योग की कार्यपद्धति का उत्तम विवरण चुआंगत्सू द्वारा प्रस्तुत किया गया है जो कि एक बढ़ई द्वारा वाद्य यंत्रों के लिये लकड़ी के स्टेंड के निर्माण से संबंधित है। बढ़ई से जब पूछा गया कि ''आपकी कला का क्या रहस्य है'' उसने उत्तर दिया ''कोई रहस्य नहीं, फिर भी कुछ अवश्य है। जब मैं स्टैंड बनाना आरंभ करता हूँ तो पहले अपने मन को पूर्ण निश्चल कर लेता हूँ। भविष्य की आशा आकांक्षाओं को विस्मृत कर मैं अपने पार्थिव अस्तित्व को भूल जाता हूँ। मेरा चित्त एकाग्र हो उठता है और बाहर के समस्त बाधक तत्व दूर हो जाते है। मैं वन में प्रवेश करता हूँ और उपयुक्त वृक्ष की खोज करता हूँ जिसमें अवश्य रूप विद्यमान हो। मन की आँखों से स्टैण्ड को देख कर मैं काम में लग जाता हूँ।''

चेन केंग ने एक बार कहा था ''जो लोग शान्त है वे ही आत्मा की उस गतिमय ऊर्जा और प्राण छन्द को आत्मसात कर सकते है जिसका साक्षात्कार अचानक ही होता है।'' निम्नलिखित मूलभूत गुणों के द्वारा ही ''प्राणछन्द'' का अवगाहन होता है।

1. स्वाभाविकता एवं सहजता

2. सार्वभौमिक सिद्धान्त

3. रचनात्मक एकीकरण

4. सादगी, शून्यता और सांकेतिकता

5. सशक्त तूलिकाघात

6. स्याही का कुशल विन्यास

आत्मा की स्वाभाविक अभिव्यक्ति का साधन बनने के लिये कलाकार को सहज साधना करना होती है। सहजता को प्राप्त करने के लिये तथा सृजनात्मक तैयारी की उच्चतम अवस्था तक पहुँचने के लिये हर युग में ध्यान और एकाग्रता की आवश्यकता का प्रतिपादन किया गया है ताकि शिल्पी प्रकृति को बिना प्रयास ग्रहण कर सके। चिंग हांगो ने कहा था–

"Heart follows, brush executes
Selects forms without doubt"

आन्तरिक चक्षुओं द्वारा वस्तु के स्वभाव को आत्मसात करते हुये शिल्पी बाहरी रूपकारों के बंधन से मुक्त हो जाता है। वह प्रकृति की नकल नहीं करता न ही उसे वस्तु और सहजता के साम्य से कोई लगाव रहता है। प्रकृति उसके अनुभव की वस्तु बन जाती है। शीघ्रता और सहजता के साथ वह अपने अनुभव को उस्तादी से अभिव्यक्त करने लगता है। श्याओ यी की चित्रण पद्धति का वर्णन करते हुये याओत्सुई लिखता है कि उसका मन द्रुत गति से ज्ञान का प्रत्यक्षीकरण करता था तथा सृजन करते समय उसके हाथ तीव्रता से कार्य करते थे, उसके एक भी तूलिकाघात को मिटाने अथवा सुधारने की आवश्यकता नहीं पड़ती थी। वांगवेई कहते थे–

"Idea should exist before the brush is taken up."

चीनी विद्वान जब कला के रहस्यात्मक यथार्थ की व्याख्या करते हैं तो वे यही कहते है कि प्रत्येक वस्तु सार्वभौमिक सिद्धान्तों पर आधारित है। चीन और जापान की चिन्तनधारा में ऐसे असीमित सिद्धान्त है जो इन सर्वव्यापी सिद्धान्तों से मिलते – जुलते है। उनमें से केवल तीन का उल्लेख किया जा सकता है। चांग येन युआन ने "Directing Idea" के बारे में कहा है जिसका संबंध चित्र की नियंत्रित प्रेरणा से है। चिंग हाओ ने ''विचार'' के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया जिसका अर्थ था सारभूत तत्वों को छोड़कर बाकी सभी वस्तुओं का परित्याग। उदाहरणार्थ बांस को चाकू से तराशते हुये चीन भिक्षु के सुंग कालीन चित्र में तूलिका का प्रत्येक आघात तराशने के ''भाव'' को प्रदर्शित करता है। अन्तिम है ''भाव'' का रूपान्तरण – भाव की अभिव्यक्ति अथवा वस्तु का उचित प्रस्तुतीकरण करने के लिये उसे मन में बार – बार आलोडित करना चाहिये जब तक वह आत्मा के साथ पूरी तरह एकीकृत न हो जाये। उसकी पहली मानसिक चेष्टा होगी रूप के सूक्ष्तम, सरलतम पक्ष का चयन। विश्लेषण के उपरांत सावधानी पूर्वक विभिन्न अंगों पारस्परिक संबंधों की रक्षा करते हुये केवल उन्हीं तत्वों की अभिव्यक्ति करना जोकि वस्तु की आत्मा, सारतत्व और ''वातावरण'' से परिपूर्ण हों। धारणा और अन्तरात्मा के इस संबंध से यही निष्कर्ष निकलता है कि प्राच्य चित्रकला का मूलमंत्र था चरम निरसन, सरलीकरण एवं सांकेतिकता (Extreme elimination, simplification and suggestion.)

तूलिका के द्वारा आकार – सृजन प्राच्य शिल्पी की मूल रचना पद्धति रही है जिसके द्वारा वह आत्मा का चित्रात्मक प्रत्यक्षीकरण करता है। इस सत्य का उचित मूल्यांकन आवश्यक है क्योंकि यह न केवल प्राच्य चित्रकला के चाक्षुष स्वभाव को निश्चित करता है बल्कि यह भी निर्दिष्ट करता है कि रंग, रूप, धरातल और भार आदि सभी चाक्षुष गुण इसी आन्तरिक सत्य के अधीन है। प्रसिद्ध थांग लेखक चांग येन युआन हमेशा ''विचार'' और ''भाव'' को ही प्रधानता देकर कहते थे कि प्रत्यक्ष अभिप्राय से उत्पन्न रूपाकारों की समस्त चेतन शक्ति तूलिका द्वारा ही अभिव्यक्त होती है। तूलिका के प्रत्येक आघात में कलाकार का स्पर्श रहता है, हर आघात का अपना निजी स्वभाव होता है, गाढा हो अथवा हल्का, सीधा या घुमावदार, कुंद अथवा नुकीला, लघु अथवा दीर्घ, संघटित तूलिकाघातों द्वारा एक आकार का निर्माण होता है जिसकी चौडाई, लम्बाई, गति, संकुचन, घनत्व, शून्यत्व, स्थैर्य और संतुलन संबंधी अपनी निजी विशेषतायें होती है। विभिन्न तूलिकाघातों का पारस्परिक

प्रभाव तथा उनके बीच का अन्तराल जिन तनावों की सृष्टि करता है उनका संतुलन बनाए रखना अति आवश्यक है।

रचनात्मक प्रक्रिया के मूलाधार है शून्यता, सादगी और सांकेतिकता। कलाकृति स्वयं ज्ञेय और अज्ञेय के बीच एक अपूर्ण संबंध को स्थापित करती है। ली शिह हुआ के शब्दों में – ''केवल शून्य और शान्त अवस्था में ही विचारों की अवधारणा होती है।'' और जब भावों का साक्षात्कार होता है तो तूलिका को इतना शक्ति सम्पन्न होना चाहिये कि वह विचारों को वहन कर सके। इसके अलावा तूलिका को अपने भीतर चित्रात्मक सत्य के साथ-साथ शून्यता को भी निहित रखना है, क्योंकि शून्यत्व की प्राप्ति होने से ही भाव आध्यात्मिक से स्पंदित हो उठते है और आध्यात्मिक रूप से जीवन्त होने पर बाधाओं का निशान भी नहीं रहता तथा बाधारहित होने पर ही आत्मिक पूर्णता आती है।

प्राणछन्द एवं चित्रगत सत्य आदि जीवन्त आदर्शो के अलावा एक भिन्न प्रकार का जीवन तूलिका और स्याही के तकनीकी माध्यमों में निवास करता है। प्राच्यशिल्पियों के सशक्त तूलिका कार्य की बराबरी कोई भी नहीं कर सका है। क्योंकि बचपन से ही उन्हें चित्रलिपि लिखने की शिक्षा तूलिका द्वारा दी जाती है। चूँकि इन चित्रलिपियों के लिखने में छन्द और सामंजस्य का होना अनिवार्य है इसलिये चित्रमय अमूर्तन का अभ्यास आरंभावस्था से ही हो जाता है।

तूलिका कार्य ही चित्रकला और केलीग्राफी के गुणों को परखने का मूल आधार रहा है। तूलिकाघातों को पेशियों, अस्थियों, मांस तथा आत्मा की संज्ञा भी दी गई है। तूलिका के छोटे और घुमावदार आघातों को पेशियाँ, लम्बे और पुष्ट आघातों को अस्थियों उठते – गिरते छन्दोमय स्पर्शों को मांस कहा गया है एवं '' प्राणछन्द'' तो आत्मा का तात्विक निरूपण है ही। इस बात पर खास ध्यान रखा जाता है कि तूलिका पर कितना और किस कोण से दबाव देना चाहिये तथा चौडे एवं पतले, रूखे और कोमल, हल्के और गहरे, सूखे और गीले आघातों को अंकित करने के लिये स्याही का प्रयोग किसी प्रकार किया जाये।

चीनी चित्रकला का पूरा रसास्वादन सबसे अधिक निर्भर करता है कि तूलिका के गुणों के प्रति दर्शक की ग्रहणशीलता कितनी तीव्र है। तूलिका के झटकों, आवेगों गतिशील घुमावों और डूबते-उतराते आघातों का आँखों और कल्पना द्वारा अवगाहन करने पर ही उसके असली मर्म को समझा जा सकता है। ऐसा कहा गया है कि तूलिका नृत्य करती है और स्याही गाती है। नितान्त स्वाभाविक और सहज तूलिका कार्य पक्षी की उड़ान की तरह है। बढ़िया केलीग्राफी को अमूर्त कला का श्रेष्ठ उदाहरण कहा जा सकता है।

तूलिका द्वारा निर्मित आकार व्याख्या करता है रूप और स्पर्श की जबकि स्याही में गाढे – हल्के, गहरे – उथले, गीले – सूखे घने या विरले आघात कोमलता और वातावरण का प्रस्तुतीकरण करते है। स्याही एक प्रकार से रंगों का प्रतिनिधित्व करती है क्योंकि निपुण चित्रकार रंग को निम्नकोटि का अनुभव मानते थे। चिंग हाओ कहते थे '' यदि तुम्हारे पास स्याही है तो सभी रंग तुम्हारे पास है।'' पोषण और संस्कृति के बिन स्याही में प्राण का तथा जीवन शक्ति के बिना तूलिका में आत्मा का अभाव होता है। कलाकार स्याही में तूलिका डुबाकर चित्रांकन के लिये तैयार होता है। जैसे कोई सर्जक अव्यवस्था में से रूपों और आकारों का सृजन कर रहा हो। फिर वह प्रेरणा से अनुप्राणित होकर चित्र को अपनी तूलिका से प्रस्फुटित होने देता है। निजी सामंजस्यों से निर्देशित होकर, क्षणिक आवेगों एवं आन्तरिक आवश्यकताओं से प्रेरित होकर वह चित्र को व्यवस्था प्रदान करता है ताकि आरंभ से अन्त तक वह सृजन प्रक्रिया की अबाध, अपूर्व परिणति हो।

चिंग हाओ ने चित्रकारों की चार श्रेणियाँ की है- दिव्य, उदात्त, अद्‌भुत और चतुर। पहला कलाकार अपूर्व प्रतिभा सम्पन्न होता है जो बिना प्रयास पूर्णत्व को प्राप्त कर लेता है। दूसरा और तीसरा उच्च श्रेणी का होता है जिसे गुणी कहते है, हालांकि उनमें स्वकीर्यता नहीं होती लेकिन वे एक उच्च बौद्धिक स्तर को कायम रखते है। अन्तिम कलाकार अपने

आन्तरिक दैत्य एवं अल्पज्ञता को अत्युक्तिपूर्ण शैली द्वारा छिपा लेता है।

चित्रकला जब दिव्यता तक पहुँचती है तो सारी बातों का अन्त हो जाता है। इस अवधारणा की पहचान है शिल्पी वू ताओ त्सू की कथा, जिसने एक महल की दीवार पर पर्वतों, वनों, मेघों, पक्षियों, मनुष्य तथा प्रकृति को समस्त वस्तुओं का भव्य दृश्य चित्र अंकित किया था। जब सम्राट इस चित्र का रसास्वादन कर रहा था तो वू ताओ त्सू ने पर्वत में बने एक द्वार की ओर इशारा किया तथा सम्राट को भीतर के रहस्य जानने के लिये अन्दर जाने हेतु आमंत्रित किया। सम्राट को अनुसरण करने का इशारा करते हुये वू ताओ त्सू ने स्वयं सर्वप्रथम द्वार में प्रवेश किया: लेकिन द्वार अचानक बन्द हो गया और शिल्पी को फिर कभी किसी ने नहीं देखा।

संदर्भ -

1. अग्रवाल,आर. ए. भारतीय चित्रकला का विवेचन, लायल बुक डिपो.
2. Chandra, Lokesh (ed) India's contribution to world thought and culture, Vivakanand Rock Memorial, Madras
3. Sullivan M, The Art of China, (Revised Edition), University of California Press, London 1977.
4. Lee, Shriman E, A History of Far Eastern Art, The Cleveland Museum of Art, Prentice Hall Inc, Englewood Cliffs, New York.
5. Mukherjee, R., The Social Function of Art, Hind Kitabs Ltd, Bombay,1951

•••

EMERGING RESEARCH JOURNAL

A Multidisciplinary Peer Reviewed (Refereed/Juried) International Journal

SUBSCRIPTION FORM TEMPLATE

I wish to subscribe to Emerging Research Journal for [1] [2] [3] Year(s). A Bank D.D. Bearing No. ..... Dated ..... for Rs./$ ..... drawn in favour Of "JABALIPUR PUBLIC COLLEGE" payble at Jabalpur, towards subscription has been enclosed herewith.

Name : .....

Designation : ..... Qualification : .....

Subscription Year : 1 Year [ ] 2 Years [ ] 3 Years [ ]

Subscription Type : Individual [ ] Institutional [ ]

Delivery Address : .....

.....

Contact No. : ..... E-mail : .....

SUBSCRIPTION RATES

DURATIOON	INDIVIDUAL	INSTITUTIONAL	ROW (USD)
One Year	Rs. 1000	Rs. 1200	$ 50
Two Year	Rs. 1500	Rs. 1800	$ 75
Three Year	Rs. 2000	Rs. 2500	$ 100

Note :

1. Subscriptions are available for a whole volume (June & Dec.) only.
2. No cancellations are permitted.
3. Claims for missing issues can be made only within 45 days of publication date.
4. All legal disputes subject to Jabalpur Jurisdiction only.

SUBSCRIPTION ADDRESS

Subscription Manager
Emerging Research Journal
Jabalpur Public College
49, Karmeta Patan Road, Jabalpur
Madhaya Pradesh Pin-482002
erj.jpc@gmail.com
Cont : 0761-2688838, 9425154312

Get it photocopied for more subscription

रिसर्च टूल्स पर हुई चर्चा, स्टूडेंट्स को किया जागरूक

जबलपुर| रिसर्च के टूल्स पर चर्चा करते हुए एक्सपर्ट्स ने स्टूडेंट्स को प्रश्नावली का निर्माण एवं उसका मानकीकरण निश्चित करना बताया। रिचर्स के महत्वपूर्ण बिन्दुओं पर अतिथियों ने अपने विचार रखे। अवसर था जबलपुर पब्लिक कॉलेज, करमेता में डेव्हलपमेंट एण्ड स्टेण्डराइजेशन ऑफ टूल्स इन रिसर्च, विषय पर चार दिवसीय कार्यशाला के शुभारंभ का। इस दौरान मुख्य अतिथि रादुविवि कुलपति प्रो. कपिल देव मिश्र रहे। इसके साथ ही डॉ. डीएन सनसनवाल, प्रो. शोभा सिंह, एसके मेहता, पीएल मिश्रा, भूपेन्द्र निगम, श्रीमती के बटारा, श्रीमती विमला भोडेले, श्रीमती आशा रिछारिया, श्रीमती गिल की उपस्थिति रही। कार्यक्रम में डॉ. अनुजा तिवारी द्वारा लिखित पुस्तक का विमोचन भी किया गया। इस अवसर पर महाविद्यालय संचालक ... प्राचार्य डॉ. श्वेता पाण्डे आदि सदस्यों का

पूर्व छात्रों ने अनुभव को किया साझा

बलपुर • लुमिनाई के नए दाधिकारियों का यन जबलपुर ब्लिक कॉलेज किया गया। तपूर्व छात्रों इस रान अपने नुभव को साझा रते हुए संस्था के लिए हमेशा सहयोग का आश्वासन दिया। संगठन में प्रीति साहू अध्यक्ष, रितु दुबे, ... पाध्यक्ष, रुपा सिंह सहसचिव, सुजाता घोष, विनय त्रिवेदी सहसचिव, शैफाली पांडे कोषाध्यक्ष मनोनीत ... स अवसर पर रितु दुबे एवं अन्य ...

Since 1995

JABALPUR PUBLIC COLLEGE

Affiliated to R.D.V.V. Jabalpur

RUN BY SHIV NARAYAN FOUNDATION

Shape your career with us

Facilities & Highlights

- Conference Hall
- Well Equipped Lab
- Library
- Wi-Fi Campus
- Canteen
- Career Guidance
- Sports & Games
- Campus Selection

- D.El.Ed.
- B.Ed.
- M.Ed.
- B.A.B.Ed.
- D.C.A.
- P.G.D.C.A.
- B.Sc. Nursing Proposed
- B.Sc. (Computer Science)
- B.Com. (Computer Application)

For More Information Contact

49, Karmeta, Patan Road, Ahead of Radio Station
Near R.T.O. Office, Jabalpur - 482002 (M.P.)
Ph. : 0761-2688838/9425154312/9826826822/9713561012
E-mail : erj.jpc@gmail.com
Website : www.erjjpc.org.in